Azim Premji Foundation

उत्तराखण्ड :
उम्मीद जगाते शिक्षक–2

ऐसा हो स्कूल हमारा...

जहां न बस्ता कंधा तोड़े
जहां न पटरी माथा फोड़े
जहां न अक्षर कान उखाड़े
जहां न भाषा जख्म उघाड़े

कैसा हो स्कूल हमारा?
जहां अंक सच-सच बतलायें
जहां प्रश्न हल तक पहुंचायें
जहां न हो झूठ का दिखव्वा
जहां न सूट-बूट का हव्वा

कैसा हो स्कूल हमारा?
जहां किताबें निर्भय बोलें
मन के पन्ने-पन्ने खोलें
जहां न कोई बात छुपाये
जहां न कोई दर्द दुःखाये

कैसा हो स्कूल हमारा?
जहां न मन में मन-मुटाव हो
जहां न चेहरों में तनाव हो
जहां न आंखों में दुराव हो
जहां न कोई भेद-भाव हो
जहां फूल स्वाभाविक महके
जहां बालपन जी भर चहके...

– गिरीश तिवारी 'गिर्दा'

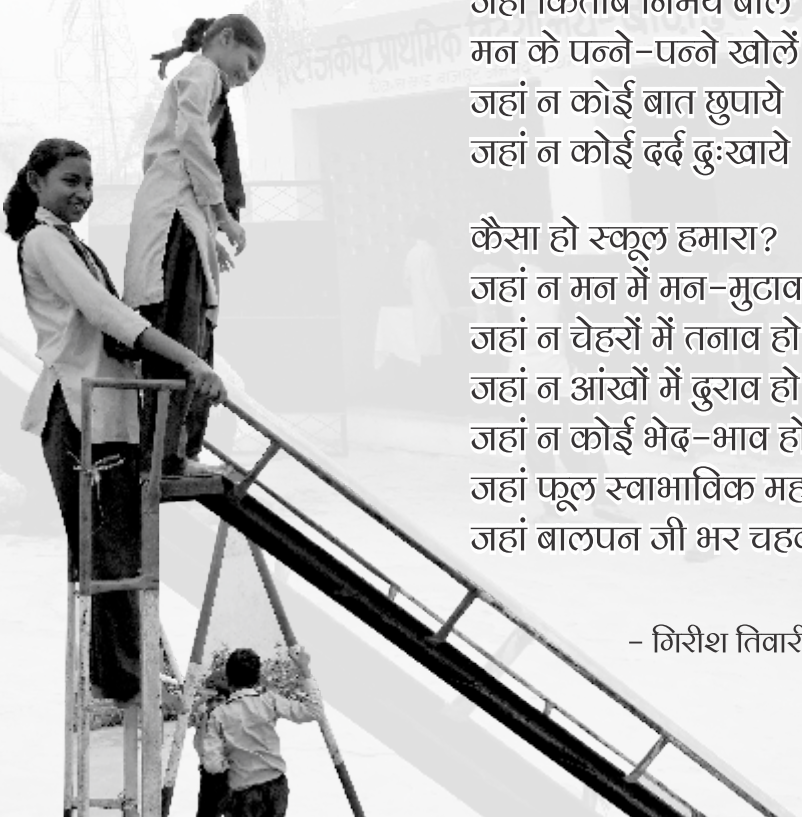

उत्तराखण्ड :
उम्मीद जगाते शिक्षक

उत्तराखण्ड के सभी
शिक्षकों को समर्पित

Azim Premji
Foundation

उत्तराखण्ड : उम्मीद जगाते शिक्षक – 2
Uttarakhand : Ummeed Jagate Shichak - 2

पहला संस्करण : फरवरी 2016

Published by:
Azim Premji Foundation
53, E.C. Road,
Dehradun - 248001, Uttarakhand
Phone/Fax : 0135 - 2659864
Website: www.azimpremjifoundation.org

विषय सूची

1. संपादकीय 1

2. **एक कारीगर जो चुपचाप तराश रहा है भविष्य** : सत्यपाल 4

3. **बच्चों की तरबियत है शिक्षक का रिर्पोटकार्ड** : रजनी नेगी 12

4. **सपनों की मंजिलें** : गीता वर्मा 21

5. **मिलजुलकर निकाली राह** : संजय कुकसाल 31

6. **सृजन की नई-नई खिड़कियां खुलती हैं यहां** : कुसुमलता 36

7. **जादू वाले सर आ गए** : धीरज खडायत 43

8. **बच्चों में घुलमिल जाती है उनकी मीठी हंसी** : शोभा बिष्ट 49

9. **एक समूची व्यवस्था हैं उनियाल सर** : हुकुम सिंह उनियाल 53

10. **परिवर्तन की ओर कदम** : महेश चन्द्र वर्मा 59

11. **दुर्गम की आस** : नितिन देवरानी 65

12. **एक स्कूल जो एकदम घर जैसा है** : विद्या लोहनी 78

चल पड़ा उम्मीदों का कारवां...

शिक्षा और समाज का घनिष्ठ रिश्ता है। शिक्षा व्यवस्था को लेकर सामाजिक विमर्श सदैव गतिमान रहता है। इस पर होने वाला सकारात्मक विमर्श इस गति को सार्थकता दे सकता है। यदि वर्तमान सन्दर्भ में देखा जाय तो शिक्षा व्यवस्था पर एक गंभीर विमर्श चल रहा है। वह चाहे बच्चों के अधिगम स्तर के न्यून होने पर हो या सरकारी शिक्षा व्यवस्था में काम करने वाले लोगों के अपने कार्य के प्रति उदासीनता के सम्बन्ध में। सरकारी विद्यालयों के कुछ अध्ययनों ने इस नकारात्मक विमर्श को और हवा दी है। शिक्षा के सार्वभौमीकरण से सम्बन्धित सकारात्मक प्रयासों की उपलब्धियों को देखने के बजाय शिक्षा के गिरते स्तर पर चल रहे नकारात्मक दृष्टिकोण पर ज्यादा ध्यान दिया गया। यही कारण है कि आजकल सरकारी स्कूली व्यवस्था की दशा और दिशा के बारे में नकारात्मक वातावरण बना हुआ है। यहां यह भी महत्वपूर्ण तथ्य है कि सरकारी शिक्षा व्यवस्था को लेकर इस नकारात्मक वातावरण बनाने में उनका काफी योगदान है, जो सीधे तौर पर इसके हितधारक नहीं हैं।

किसी भी विमर्श के नकारात्मक और सकारात्मक दोनों तरह के दृष्टिकोण होते हैं। यही तथ्य सरकारी शिक्षा व्यवस्था पर भी लागू होता है। जहां एक तरफ सरकारी शिक्षा व्यवस्था के प्रति कुछ नकारात्मकता दिखाई देती है, वहीं कुछ लोगों द्वारा किये जा रहे महत्वपूर्ण प्रयासों से सरकारी शिक्षा के प्रति आशा की किरण भी दिखाई देती है। यह दुर्भाग्य ही है कि सरकारी व्यवस्था में आज तक ऐसी प्रक्रियाओं का नितान्त अभाव है जो कि अपने जुनून, निष्ठा एवं ईमानदारी से काम करने वाले व्यक्ति को और प्रोत्साहित कर सके। इसके उलट निष्ठा एवं ईमानदारी की राह मुश्किल मानी जाती है। ऐसे में भी कई लोग हैं जो स्वप्रेरित होकर इस मुश्किल राह की ओर कदम बढ़ाते हैं और अपने जुनून में काम करते रहते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि यह मुश्किल राह उन्होंने चुनी तो जरूर हैं लेकिन राष्ट्र निर्माण में यही एक राह है जो आने वाले भविष्य को बेहतर बनायेगी।

हमने एक छोटा सा प्रयास किया है कि सरकारी शिक्षा व्यवस्था में इस प्रकार के समर्पित और जुनूनी लोगों की पहचान की जाय और उनके कार्यों को शेष लोगों तक पहुंचाया जाय। इस तरह के प्रयास के दो लाभ हमें दिखते हैं पहला कि लोगों द्वारा किये गये कार्य को सराहना मिले और दूसरा वे अन्य साथियों के लिए प्रेरणा स्रोत बन सकें। वस्तुतः यही लोग हैं जिन्होंने सरकारी शिक्षा व्यवस्था के प्रति उम्मीद को जगाये रखा है।

इन्हीं उम्मीदों को, कुछ करने की इच्छाओं व कोशिशों, को सलाम करने की एक कोशिश थी 'उम्मीद जगाते शिक्षक' का पहला अंक। उस अंक के बनने की प्रक्रियाओं के दौरान तमाम सवाल भी थे, संशय भी। यह आसान कहां है कि चंद कदमों से हर प्रयास तक पहुंचा जा सके, हर उम्मीद जगाते शिक्षक के कंधे तक कोई हाथ पहुंच सके। उन्हें भी कहां फिक्र है किसी के अपने साथ होने की न होने की, किसी पुरस्कार, किसी प्रशंसा की। वो तो बस अपनी धुन के पक्के मुसाफिर की तरह अपने सफर पर चलते चले जा रहे हैं। ऐसे ही कुछ अनुभव जो हमारे पास थे उन्हें सहेजकर साझा करने की इच्छा के चलते अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन ने 2015 में शिक्षा जगत में जहां कहीं भी कुछ सकारात्मक होता दिखा, और जहां हमारे साथी उन तक पहुंच सके उन्हें 'उम्मीद जगाते शिक्षक' नाम से प्रकाशित किया। न सिर्फ शिक्षा जगत में बल्कि शिक्षा जगत के बाहर भी लोगों ने इन कहानियों को पढ़ा, सराहा और ऐसी कहानियों को पढ़ने की इच्छा भी जाहिर की। इस बीच हमारे अनुभव भी बढ़ते रहे।

वर्तमान संस्करण में आप पायेंगे कि उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में ये साथी किस तरह इन्हीं मौजूदा हालात में बिना कोई शिकवा–शिकायत किये कुछ नया, कुछ बेहतर करने का प्रयास कर रहे हैं। सुगम–दुर्गम की परिभाषाओं से परे ये शिक्षक कुछ बेहतर करने का प्रयास कर रहे हैं। इनके बारे में जानने पर आप पायेंगे कि इनमें से हर एक अपने स्तर पर कुछ नया करने का प्रयत्न कर रहा है और उनके इन प्रयत्नों से इन्हें वांछित सफलता भी मिल रही है। ऐसा दावा नहीं है कि उम्मीद जगाते शिक्षक की श्रृंखला में प्रकाशित होने वाले शिक्षक ही बेहतरी की ओर अग्रसर हैं बल्कि हमारा

यकीन है कि यह संख्या काफी ज्यादा है, जिन तक हमारा पहुंचना अभी बाकी है। इन शिक्षकों के बहाने हम उन तमाम कोशिशों को भी सलाम कर रहे हैं जिनका जिक्र फिलहाल रह गया है। इन कहानियों के जरिये शिक्षा जगत में घिर आई नकारात्मकता को तोड़ने का प्रयास ही हमारा उद्देश्य है।

पिछले संस्करण की स्वीकार्यता और नये प्रयासों के बारे में जानने की और उत्सुकता ने हमें इस सिलसिले को जारी रखने के लिए प्रेरित किया। इसी के चलते 'उम्मीद जगाते शिक्षक' का दूसरा अंक साझा करते हुए उत्साहित हूं।

शुभकामनाओं सहित

कैलाश चन्द्र काण्डपाल
राज्य प्रमुख
अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, उत्तराखण्ड

सत्यपाल
प्रधानाध्यापक
राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय
सुनाली, पुरोला
जनपद – उत्तरकाशी

एक कारीगर जो चुपचाप तराश रहा है भविष्य...

सहायक अध्यापक – श्री भजन सिंह रावत, श्री चन्द्रभूषण बिजल्वाण
सीआरसीसी – श्री जगवीर सिंह रावत
भोजनमाता – श्रीमती सरोज एवं श्रीमती अजपाली देवी
नामांकन – 32

सार्वजनिक सेवा के दौरान सेवाकर्मी जैसे ही सेवाकाल के आखिरी दौर में प्रवेश करता है, कई बार उसमें थकान के साथ–साथ निराशा के भाव भी पैदा होने लगते हैं। हो भी क्यों न? इतने लंबे समय तक एक जैसी ऊर्जा बनाये रखना, खुद को अपडेट रखना कोई आसान काम तो है नहीं और न ही हर एक के बस की बात है। तिस पर लगातार हो रहे बदलावों के साथ खुद को बनाये रखना और भी मुश्किल है। आखिरी के चार–पांच सालों में तो व्यक्ति सोचता है कि अब मेरे लिये करने जैसा कुछ रहा नहीं। अब क्या करूं, बहुत कुछ कर लिया मैंने। खासकर जब विद्यालयों के संदर्भ में बात हो तो बहुत से लोग विद्यालय मैदान के कोने में कुर्सी लगाकर पहले से ही ये भाव लेकर बैठ जाते हैं जैसे कि उनका इस विद्यालय से अब कोई सरोकार रह ही न गया हो। लेकिन इनमें कुछ ऐसे भी शख्स होते हैं जो हर एक दिन को उसी ऊर्जा के साथ जीते हैं जैसी ऊर्जा लेकर वे शुरुआती दौर में आते हैं। न उम्र उनके आड़े आती है न निर्धारित समय। ऐसी ही एक शख्सियत हैं सत्यपाल जी।

1 जुलाई सन् 1955 को मिर्जापुर, जिला सहारनपुर, उत्तर प्रदेश में श्री राम सिंह जी के घर जन्मे सत्यपाल जी, जो कि शिक्षक के रूप में अपने सार्वजनिक सेवाकाल के अंतिम दौर में हैं। इंटर की पढ़ाई पूरी करने के बाद, बीएससी प्रथम वर्ष उत्तीर्ण किया। इसके बाद बीटीसी करके एक शिक्षक के तौर पर इन्होंने अपने जीवन की नयी यात्रा की शुरुआत की।

जिला शिक्षा संस्थान रुड़की से सन् 1976 में बीटीसी करने के बाद सत्यपाल जी ने सन् 1977 से 1982 तक सहारनपुर के एक प्रतिष्ठित निजी विद्यालय के शिक्षक के तौर अपना काम करते हुए, कर्मठता से उक्त विद्यालय को ऊंचाईयों पर पहुंचाया। इसी बीच सरकारी विद्यालयों में नियुक्तियां आरंभ हुईं और इन्होंने 18 मार्च 1982 में डुण्डा ब्लॉक के जूनियर हाई स्कूल बॉन में विज्ञान विषय के शिक्षक के तौर पर नियुक्ति पाई। सत्यपाल जी बताते हैं–''इसके पहले मैं कभी पहाड़ों में नहीं आया था। पहाड़ों को लेकर मन में पहले से ही कौतूहल था। इनके बारे में

किताबों में पढ़ता या टेलीविजन में देखता तो रोमांचित होता और बहुत से सवाल मन में पैदा होते। यहां के लोगों के बारे में मैंने सुना था कि वे बहुत ही ईमानदार होते हैं। मैंने यहां आकर ऐसा ही पाया।' बॉन विद्यालय में इन्होंने अपने जीवन के बहुत ही महत्वपूर्ण, सुखद 8 साल बिताये। उनके अनुसार– ''यहां के शिक्षक साथियों का साथ बहुत ही अच्छा रहा। यहां हमने अपनी कार्यशैली से लोगों का मन जीता। लोगों ने हमें पांच कमरों का एक भवन दिया था और रात को सभी विद्यार्थी एवं शिक्षक वहां पर रहकर पढ़ाई किया करते थे। तब मां–बाप के मन में शिक्षकों के प्रति बहुत सम्मान था।'' एक तरह से उन्होंने अपने बच्चों को शिक्षकों को सौंप दिया था। इतना ही नहीं बल्कि वहां अभिभावक भी अपने बच्चों के साथ रोज आते थे और वहां बैठकर बच्चों के साथ पूरा समय बिताते थे। सत्यपाल जी मानते हैं कि बॉन के लोगों में शिक्षा की भूख थी। जब 'बॉन' गांव से इनका तबादला हुआ तो गांव वाले नहीं चाहते थे कि सत्यपाल जी इस गांव से जाएं। पर सरकारी व्यवस्था के हिसाब से इन्हें वहां से जाना ही था। इसी बीच इन्होंने गढ़वाल विश्वविद्यालय से स्नातक की पढ़ाई भी पूरी कर ली।

सत्यपाल जी बताते हैं कि उनके गुरु श्री यदुनाथ जी और श्री रामशरण जी का उन पर काफी सकारात्मक प्रभाव पड़ा। ये अपने साथियों के बारे में बात करते हैं–''मैं बहुत ही सौभाग्यशाली हूं कि मेरे साथ हमेशा ही शिक्षकों का भरपूर सहयोग रहा। मेरा मानना है कि सभी लोग अच्छे होते हैं। कोई भी गलत नहीं करना चाहता। उनके गलत होने के पीछे कुछ न कुछ कहानी होती है, जिसको समझना जरूरी है। फिर वे आपके लिये मददगार होते हैं।''

बॉन विद्यालय से आने के बाद ये ढाई साल जूनियर हाई स्कूल बर्नीगाड, उत्तरकाशी में रहे। यहां का सफर भी काफी अच्छा रहा। यहां भी बॉन विद्यालय के अनुभवों को आगे बढ़ाया। सभी शिक्षक साथी सायं का भोजन करने के बाद बच्चों के साथ विद्यालय में जाते थे और वहां पढ़ाई करते थे। यहां सभी शिक्षक बारी–बारी से बच्चों के साथ रात्रि को रहते थे इसका परिणाम यह रहा कि विद्यालय के 80 से 85 प्रतिशत बच्चों के स्तर में सुधार आया जिसे अभिभावकों ने भी महसूस किया।

बर्नीगाड से स्थानांतरण के बाद सत्यपाल जी राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय करड़ा पुरोला में पदोन्नत होकर आये और यहां दस साल तक सेवा दी। इसके बाद सन 2002 से अनवरत राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय सुनाली में सेवारत हैं।

वे कहते हैं, 'आज तो सरकार की ओर से कपड़े एवं पुस्तकें

साथियों की राय...

सत्यपाल जी के लिये मैं कर्मठ शब्द का प्रयोग करना चाहूंगा। इनको अपना काम करना है चाहे इनकी कोई प्रशंसा करे या आलोचना। जितना मैं इनको जान पाया हूं ये जो भी काम हाथ में लेते हैं उसको पूरा करके ही दम लेते हैं। यदि कोई काम नहीं आता है तो उसको सीखते हैं। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है कंप्यूटर संबंधी दक्षता और अंग्रेजी पढ़ाना।

''विद्यालय में संसाधनों को जुटाने में इनकी बड़ी भूमिका रही है। आज हमारे विद्यालय के सभी कमरों में बिजली की व्यवस्था है, 3 प्रिंटर हैं, इनवर्टर है बड़ा स्टैबलाईजर है। ये सभी सत्यपाल जी ने विद्यालय के लिये जुटाये हैं। और इसके खर्च का एक बहुत बड़ा हिस्सा इन्होंने खुद वहन किया है।''

''शुरू में जब मैं इस विद्यालय में आया था मुझे कई लोगों ने बताया कि सत्यपाल जी के साथ काम करना आसान नहीं है। इनके साथ कोई टिक नहीं पाता। पर मुझे आज लगता है कि जो काम नहीं करना चाहते वे इनके साथ नहीं टिक पायेंगे। ये किसी को कुछ बोलते ही नहीं है। खुद के काम से दूसरे को दिशा देने का काम करते हैं।''

–श्री चन्द्रभूषण बिजल्वाण

सहायक अध्यापक

संसाधनों की खरीद रख–रखाव एवं उपयोग संबंधी गोपनीयता इन्होंने कभी नहीं रखी। जितने भी अभिलेख हैं साथी लोग ही उनको देखते हैं और उसका लेखा–जोखा रखते हैं। हमारे स्टाफ में तालमेल का एक बड़ा कारण यह है कि इन्होंने कभी किसी को निर्देशित नहीं किया इसलिये सभी खुद को जिम्मेदार मानते हैं और स्वप्रेरणा से काम भी करते हैं। कभी किसी सहयोगी साथी के बारे में नकारात्मक बात नहीं करते हैं।

– भजन सिंह रावत जी

सहायक अध्यापक

मुफ्त में दी जा रही हैं, साथ ही भोजन भी दिया जा रहा है। लेकिन मैं जिस भी विद्यालय में रहा, वहां कुछ ऐसे बच्चों को गोद लिया जिनकी आर्थिक स्थिति बहुत खराब रही। उनकी शिक्षा–दीक्षा में आने वाले खर्च को मैंने खुद वहन किया। उनके लिये पुस्तकों की व्यवस्था, पढ़ाई के लिये अन्य सामान की व्यवस्था भी की, साथ ही उनके व्यक्तिगत खर्च की व्यवस्था भी। प्राथमिक विद्यालय सुनाली में तो हम सभी शिक्षकों ने बच्चों को गोद लिया था। उनके लिये कपड़ों की व्यवस्था पुस्तकों की व्यवस्था हम ही करते थे।'

वो कहते हैं कि ''मैंने नौकरी को नैतिक कर्तव्य के हिसाब से लिया है। हमेशा अपनी अन्तरात्मा से सोचा कि मुझे और बेहतर करना चाहिए। मैं उसके लिये प्रयासरत रहा हूं। मैंने खुद को कभी समय में नहीं बांधा। मेरे लिये विद्यालय सिर्फ 9 बजे से 5 बजे तक नहीं है। मैंने अपने पूरे सेवाकाल में हरदम यह कोशिश की कि मैं अपना अधिक से अधिक समय विद्यालय को दूं। जितना समय मिलता है कोशिश यही रहती है कि हम बच्चों के लिये कुछ अतिरिक्त प्रयास कर सकें। सिर्फ समय की पाबंदी बेहतर काम करने के लिए काफी नहीं।'

जब पूछा गया कि क्या रात्रि की कक्षाओं का विचार सुनाली में नहीं आया तो सत्यपाल जी ने बताया–''मेरे मन में यह विचार आया था कि मैं रात को सुनाली में रहूं और यहां भी और विद्यालयों की तर्ज पर रात्रि के समय में बच्चों को पढ़ाऊं। कई बार इस बारे में सोचा। लेकिन आज परिस्थितियां काफी बदल गयी हैं बच्चों में भी बहुत परिवर्तन आये हैं। समाज में भी कई

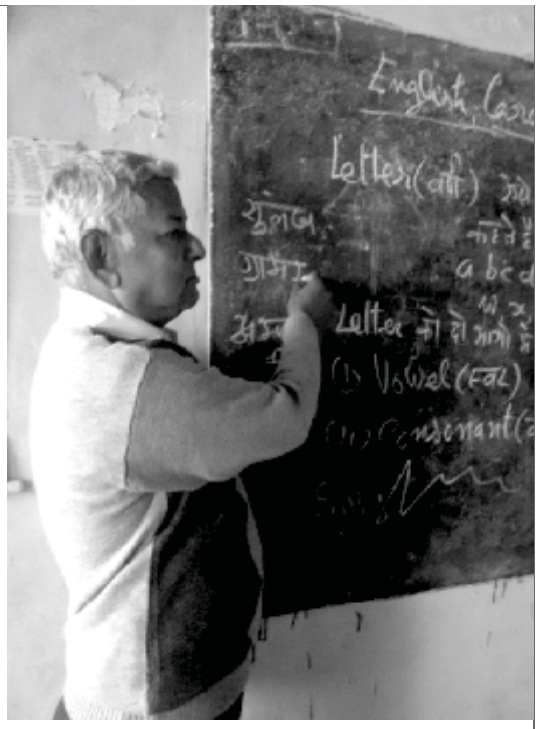

बदलाव आये हैं सो अब हम ऐसा करने में खुद को सहज नहीं समझते। इसकी पूर्ति के लिये हम अपने विद्यालय में हर साल लगभग पांच माह अतिरिक्त कक्षाएं चलाते हैं इसमें हमारे सभी साथी सहयोग करते हैं। गांव के लोग हमें बहुत उत्साहित करते हैं। अधिकारी भी इस बात से अवगत हैं।

''बदलती परिस्थितियों में खुद को अपडेट रखना बहुत जरूरी है। मैं नया सीखने को हमेशा तैयार रहता हूं, क्योंकि पहले बच्चा पूर्णतया विद्यालय पर निर्भर था। उसकी जानकारी का स्रोत सिर्फ विद्यालय था। आज ऐसा नहीं है। सूचना क्रांति की वजह से बच्चे बहुत कुशाग्र बुद्धि के हैं वे बहुत सी चीजें बाहर की दुनिया जैसे अखबार, टीवी, इन्टरनेट आदि से भी सीखते हैं। इसलिये शिक्षकों पर ज्यादा दबाव आ गया है कि वे खुद की जानकारी को पुख्ता करें और नयी–नयी जानकारियों के संपर्क में रहे। आज के बच्चों का आत्मविश्वास पहले के बच्चों से कहीं अधिक है हालांकि वे व्यवहारिकता में कमजोर पड़ते हैं। जब उनके सामने कोई परिस्थिति आ जाती है तो वो उसका मुकाबला ठीक से नहीं कर पाते हैं।

''पढ़ाते वक्त हम अक्सर मशीन की तरह हो जाते हैं। पढ़ाना इनपुट और आउटपुट का मामला नहीं है। मतलब इधर बच्चों को कुछ बताया उधर दो चार सवालों के जवाब के आधार पर उसको जांचा। मुझे लगता है जो भी हम पढ़ा रहे हैं, उस पर प्रश्न खड़ा करने की आवश्यकता है– मैं जो पढ़ा रहा हूं वह बच्चे की कितनी समझ में आ रहा है, क्या वह उसके जीवन से जुड़ पा रहा है, कौन सी बातें इसमें और जोड़ने की जरूरत है। अन्यथा हम सार्थक शिक्षा नहीं दे पायेंगे। न ही हम बच्चे को जिज्ञासु बना पायेंगे।

बच्चों की नजर में...

उनकी पढ़ाई और समझायी हुई बातें हमको समझ में आ जाती है और याद हो जाती हैं। वे डांटते कतई नहीं हैं। जब तक बच्चों को समझ में नहीं आ जाता तब तक वे समझाने की कोशिश करते हैं। एक बार हमको समझ में नहीं आ रहा था तो सर ने कहा कि हम सभी लोग सुबह एक घंटा पहले आयेंगे क्योंकि दिन में तो कई विषय पढ़ने होते हैं और 35 मिनट में उतना कवर भी नहीं होता इसलिये सर लोग हमको एक घंटा रोज सुबह एक्स्ट्रा पढ़ाते हैं।

सर ने हमको पढ़ाने के लिये कंप्यूटर पर अभ्यास बनाये। पहले हमको कंप्यूटर से डर लगता था। पर जब सर हमसे अभ्यास करवाते रहे तो हमको समझ में आ गया।

कोई भी विषय तभी रुचिकर होगा जब हम बच्चों के मन में उसके प्रति जिज्ञासा पैदा करें जिज्ञासा तभी पैदा होगी जब हमारे जीवन में उसकी उपयोगिता महसूस होगी।''

''बच्चों को सुनना और समझना बहुत जरूरी है। विद्यालय में 'मन की बात' पेटिका एक ऐसा सशक्त माध्यम है कि इससे हम बच्चों के और करीब आ सकते हैं– एक विद्यार्थी ने इसके माध्यम से हम तक बात पहुंचायी कि अंग्रेजी फलां शिक्षक को पढ़ाना चाहिए। बच्चों की बात का सम्मान करते हुए हमने इसको बदला और कुछ अन्य कोशिशें भी परवान चढ़ी। बच्चों में इसके विश्वास जागा और उनको लगा कि हमारी बात का भी महत्व है।''

''कई बार ऐसी भी परिस्थितियां आती हैं– बच्चों को पढ़ना तो आता नहीं सो क्या करें? मुझे यह समझ में आया कि यदि उनको पढ़ना नहीं आता तो समझ में तो आता है, वे किसी अवधारणा को सुनकर समझ तो पाते ही हैं। वह भी तो समय रहा जब हमारे पास लिखित अभिव्यक्ति की संभावनाएं नहीं थी तो हम सुनकर समझकर जीवन में उसका उपयोग करते थे। सो बच्चों के साथ इसका प्रयोग करके बहुत सी अवधारणाओं को समझाया जा सकता है। नयी–नयी बातें समझायी जा सकती हैं। इसलिये मेरी यह धारणा बदली कि बच्चे को यदि किताब

पढ़ना नहीं आता हो तो उनको जानकारी नहीं दी जा सकती है उसको समझाया तो जा ही सकता है।''

''हम अध्यापक हैं हमारा दायित्व है कि हम बच्चे को समझें और बच्चे को अपना सर्वस्व दें क्योंकि जिन अभिभावकों के बच्चे हमारे पास आते हैं, उन्हें बहुत सी चीजें मालूम नहीं। यदि हम आज अच्छा नहीं करेंगे तो आने वाली पीढ़ियां हमको कोसेंगी। हमारे बच्चे समाज में पिछड़ न जायें इसलिये हमें अपने विद्यालय में बच्चों को समाज बदलावों के साथ चलने के लिये तैयार करना है।''

''मुझे इस बात का संतोष है कि मैंने अपना श्रेष्ठतम प्रयास करने की कोशिश की। एक व्यक्ति के रूप में हो सकता है कि मैं कई जगह कमजोर रहा हूं पर मैंने आधे–अधूरे मन से कोई प्रयास नहीं किया। आज भी जब पुराने विद्यार्थी मिलने आते हैं तो पहले की ही तरह वे बहुत प्यार से सब्जी–दाल आदि लेकर भी आते हैं और अपने जीवने के अनुभव साझा करते हैं। मुझे लगता है कि यही मेरी कमाई है।

(सत्यपाल जी की संजय सिंह रावत से हुई बातचीत पर आधारित)

रजनी नेगी
प्रधानाध्यापिका,
राजकीय प्राथमिक विद्यालय खगेली
जनपद– चमोली

बच्चों की तरबियत है शिक्षक का रिर्पोटकार्ड

सहायक अध्यापक – चन्द्रमोहन सिंह
सीआरसीसी – प्रकाश डिमरी
भोजनमाता – मंजू देवी, बिलदई देवी
नामांकन – 27

उत्तराखण्ड के चमोली जिले में एक स्कूल है राजकीय प्राथमिक विद्यालय खगेली। यह विद्यालय गौचर से करीब आधा घंटे की दूरी पर है। बेहद खूबसूरत लेकिन मुश्किल रास्तों का हाथ थामे हम खगेली की तरफ बढ़ते हैं। सारे रास्ते पिंडर नदी हाथ थामे चलती जाती है। शांत पहाड़ी रास्तों में उस खूबसूरत नैसर्गिक नदी का साफ पानी और कल...कल...कल...कल... की आवाज किसी ख़्वाब में बुनती हुई धुन सी मालूम होती है। नदी की कल कल किसी पुकार सी मालूम होती है जिसे हमारे साथ जा रही रजनी नेगी जी भांप जाती हैं। 'आपको नदियों से बहुत प्यार है ना?' मैं चौंककर उनकी तरफ मुड़ती हूं। 'हां, लेकिन मैंने ऐसा कहा तो नहीं।' मैंने पूछा। वो सिर्फ मुस्कुराईं। सुनने के लिए सब कुछ कहना कहां जरूरी होता है....मुझे अपनी ही बात याद आई। मैंने रजनी जी से कहा, नदियों में अजीब सा आकर्षण होता है। मैंने इतनी खूबसूरत नदी नहीं देखी। इतना साफ पानी.. वो बोलीं लौटते वक्त हम नदी के किनारे जरूर बैठेंगे। उनका यह कहना मुझे राहत देता है।

कठिन से कठिन सफर भी मनचाहे हमसफर के साथ खुशनुमा हो उठता है फिर मैं तो एक बेहद खूबसूरत सफर पर थी बेहद ऊर्जावान शिक्षिका रजनी नेगी के साथ। रास्ते भर हमारी बात होती रही। घर, परिवार, स्कूल, रास्ते जीवन सब। खगेली पहुंचते–पहुंचते मैं उस स्कूल को काफी हद तक जान चुकी थी। उस समुदाय को भी। उस तक पहुंचने वाले रास्तों को भी। वो रास्ते जो पर्यटकों के लिए लुभावने और रहने वालों के लिए चुनौती भरे हैं। बरसात में इन खूबसूरत सपीर्ली राहों का हाल और भी दुश्वार हो जाता है। कई बार स्कूल तक पहुंचना ही मुश्किल हो जाता है क्योंकि रास्ते बंद हो जाते हैं।

खुलता है आश्चर्य का दरवाजा

आधे घंटे का सफर तय तरने के बाद हम प्राथमिक विद्यालय खगेली पहुंचते हैं। रजनी जी की आवाज कान में पड़ती है इधर से आइये मैडम, इधर से...वो एक पतली सी सर्पीली पहाड़ी पगडंडी से पुकार रही थीं। वो हाथ बढ़ाती हैं, मैं उनका हाथ थामकर चल पड़ती हूं। पूरा रास्ता कुदरत

का अलौकिक मंजर। मुझे इस बात का बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि जितना भी अब तक देखा सुना महसूस किया है उससे भी सुंदर नजारा अभी सामने आना बाकी था। फूलों और फलों वाले पेड़ों के झुरमुट के बीच से प्राथमिक विद्यालय खगेली का बोर्ड मुस्कुराता हुआ दिखता है। उस गेट के अंदर पहला पांव पड़ते ही एक साथ 'वेलकम टू अवर स्कूल' का स्वर गूंजता है। ढेर सारे बच्चे कोई वेलकम सांग गाते हैं। उनकी अंग्रेजी बोलने की धारा प्रवाहमयता चौंका देती है।

थोड़ी दूर से चीजें साफ नजर आती हैं

तमाम प्रक्रियाओं के बैकग्राउण्ड में रहते हुए एक पूरा दिन स्कूल में बिताना स्कूल को समझ पाने में ज्यादा मददगार होता है। रजनी जी बच्चों के साथ व्यस्त हो जाती हैं। बच्चे पूरे स्कूल में घूमते हुए बिखरे हुए कचरे को जमा करके कचरे के डिब्बे में डालते हैं। सफाई करने के बाद सब बच्चे साबुन से हाथ धोते हैं और तौलिये से पोछते हैं। तभी टन टन टन...स्कूल की घंटी बजती है। गर्दन घुमाती हूं तो नन्हा ऋतिक पूरी ताकत से घंटी बजा रहा था। यह असेंबली लगने का संकेत था।

मॉर्निंग असेंबली

दो लाइनें लगती हैं। बच्चे खुद–ब –खुद अनुशासित ढंग से लाइन में लगते हैं। कुछ बच्चे सामने आते हैं। प्रेयर होती है। इसके बाद अखबार पढ़ा जाता है। इसके बाद एक–एक करके सारे बच्चे सामने आते हैं और कविता, कहानी, अखबार की खबर, कबीर या रहीम के दोहे आदि सुनाते हैं। बच्चों की अभिव्यक्ति इतनी सहज और आत्मविश्वास से भरी हुई थी कि हैरत भी हो रही थी और खुशी भी। उनकी हिंदी और अंग्रेजी दोनों पर मजबूत पकड़ और आवाज का खुलापन मानो सामने फैले नीले आसमान को चुनौती देते

हुए कह रहा हो कि जब मैं उड़ूंगा तो तुम छोटे पड़ जाओगे बच्चू। पूरी असेंबली तकरीबन 40 से 50 मिनट चलती है लेकिन इसमें रजनी सिर्फ दर्शक की भूमिका में ही नजर आती हैं। प्रार्थना सभा व्यवस्थित ढंग से बच्चे स्वयं संचालित करते हैं। प्रार्थना सभा में सभी बच्चों की भागीदारी होती है। सब सामने आते हैं और कुछ न कुछ सुनाते हैं। हर दिन अलग बच्चे की जिम्मेदारी होती है। स्कूल की घंटी बजाने की, प्रार्थना सभा के संचालन की, भोजन की, खेलकूद की। ये जिम्मेदारियां रोज बदलती रहती हैं। यानी सभी बच्चों को परफॉर्म करने का मौका मिलता है। खुद से आगे बढ़कर गतिविधियों को हाथ में लेने का मौका मिलता है। कोई बच्ची ऊंचे स्वर से अभिनय के साथ गाती है–

अभी खबर दिल्ली से आई

मक्खी रानी उसको लाई

ट्ड्डे ने हाथी को मारा

हाथी क्या करता बेचारा

घुस बैठा मटके के अंदर

मटके में थे ढाई बंदर....

स्कूल बिल्डिंग

इस स्कूल की नई–नई बनी बिल्डिंग की दीवारों पर नयापन पूरा तरह से काबिज था। रास्ते में रजनी जी ने बताया था कि वे 14 सालों से इस स्कूल में हैं। स्कूल की पुरानी इमारत एकदम जर्जर हो चुकी थी। उन्होंने महज साढ़े चार महीनों में स्कूल की यह बिल्डिंग बनवाई। जाहिर है यह सब आसान तो नहीं रहा होगा। वो कहती हैं, पुरानी स्कूल की बिल्डिंग

बहुत खस्ताहाल थी। ज्यादा ध्यान बिल्डिंग पर रहता था और चिंता रहती थी कि कहीं कोई हादसा न हो जाए। काफी दौड़–भाग के बाद स्कूल की बिल्डिंग का बजट पास हुआ। समुदाय के लोगों को तमाम प्रक्रियाओं से अवगत कराया गया। लेकिन स्कूल की बिल्डिंग बनने की प्रक्रिया में रजनी जी को काफी मशक्कत करनी पड़ी। पारदर्शी सरकारी प्रक्रिया में वक्त तो लगता ही है लेकिन रजनी जी ने तय किया था कि स्कूल के काम में कोई व्यवधान नहीं आने देंगी। वो बताती हैं कि 'पहाड़ों पर बिल्डिंग बनाने का काम आसान नहीं होता। मैंने बाहर से कारीगर बुलवाये काम के लिए। सरकार से पैसा रिलीज नहीं होता था और यहां मजदूर रोज शाम पैसा मांगते थे। काम रोकने का अर्थ था महीनों का विलम्ब। बारिश आने के पहले मुझे काम खत्म करना ही था। काम न रुके इसलिए आखिर मैंने अपना फिक्सड डिपॉजिट तोड़ दिया। अच्छी बात यह हुई कि मेरे इस काम में मेरे परिवार खासकर पति ने काफी साथ दिया। लेकिन खराब बात यह हुई कि मुझे इस तरह जुनून के साथ बिल्डिंग बनवाते देख कुछ लोगों को कुछ अखर भी रहा था। लोगों के मन में शक पनपने लगा कि जरूर इससे मैं कुछ घपला कर रही हूं। समुदाय के लोग जो अब तक मेरे साथ थे, कुछ लोगों के मन में शक के बीज बो दिए गए। मन में मैं कहीं कमजोर जरूर हुई लेकिन इरादों में नहीं। सरकार में मेरे खिलाफ शिकायतें की गईं। जांच हुई लेकिन मैंने काम बंद नहीं होने दिया। लोग अपना काम करते रहे, मैं अपना काम करती रही। लोगों को, मेरे खिलाफ होने वाली जांचों को भी मेरे खिलाफ कुछ न मिल सका लेकिन मेरे बच्चों के पास एक सुंदर सुरक्षित स्कूल की बिल्डिंग जरूर है। मुझ पर शक करने वाले आखिर खामोश हो गये। अब समुदाय, शिक्षा विभाग सबका भरोसा मेरे साथ है कि सच उन्होंने जान लिया है।'

थोड़ी ही देर में एक बूढ़ी दादी हाथ में हंसिया और लोटे में चाय लेकर वहां आती हैं। वो शारदा देवी हैं। उनकी पोती इसी स्कूल में पढ़ती है। दादी की बनी चाय हम पीते हैं। वो एक पेड़ की डाल पर जानवरों के लिए नरम पत्ते तोड़ने को चढ़ जाती हैं। मैडम क्लास में पढ़ाने चली जाती हैं और शारदा देवी मैडम के बारे में बताना शुरू करती हैं, 'हमारी मैडम बहुत अच्छी हैं। बच्चों को बहुत प्यार करती हैं। बच्चों के जुएं भी निकाल देती हैं और नाक भी साफ कर देती हैं। हमारे बच्चे टाई पहनकर स्कूल आते हैं और अंग्रेजी में बात करते हैं तो हमको बहुत अच्छा लगता है। यहां इतनी अच्छी पढ़ाई होती है कि सारे बच्चे यहीं आते हैं इसलिए आसपास के प्राईवेट स्कूल बंद हो गए। कोई वहां भेजता ही नहीं बच्चों को। आप खुद ही देख लो मैडम ने अपने घर से पैसा लगाकर स्कूल की बिल्डिंग बनवाई है। कोई ऐसा करता है भला। बहुत अच्छी है हमारी मैडम।'

कक्षा–कक्ष प्रक्रिया

वैसे तो स्कूल में दो शिक्षक हैं। एक रजनी नेगी खुद और दूसरे चन्द्रमोहन सिंह। एक की अनुपस्थिति में दूसरा शिक्षक सभी बच्चों को अकेले कैसे संभालना है सीख चुके हैं। सारे बच्चों को एक साथ किसी न किसी काम या गतिविधि में लगाकर रखना चुनौती तो है लेकिन असंभव नहीं। वो एक ही कक्ष में अलग–अलग क्लास के बच्चों को अलग–अलग समूहों में बिठाती हैं। एक क्लास को भाषा का पाठ पढ़ाकर बीच में छोड़ देती हैं जिसे बच्चे आगे खुद से पढ़ते हैं। दूसरी क्लास को गणित के सवाल बताती हैं इसी बीच नन्हे बच्चों को गीत करवाने के लिए उनमें से एक बच्चे को बोलती हैं। वो अपने को थोड़ा–थोड़ा सबके हिस्से में बांटती हैं। बच्चों

का उत्साह, उनके प्रश्न पूछने के ढंग बच्चों का बेझिझक होना बता रहा था कि बच्चे शिक्षिका के साथ कितने सहज हैं।

ऐसा भी होता है मिड डे मील

मंजूदेवी और बिलदई देवी भोजन माताएं हैं। उन्होंने इस बीच गर्मागर्म खाना तैयार कर लिया। दाल चावल, सब्जी, पापड़, अचार। अचार समुदाय के लोगों ने बनाकर दिया। समुदाय से सब्जियां वगैरह भी आती हैं जो बच्चों की थाली में जाती हैं। भोजन का समय होते ही बड़े से बरामदे में छोटी–छोटी मेज व कुर्सियां लग जाती हैं। बच्चे लाइन लगाकर हाथ धोने जाते हैं। जहां भोजनमाता उन्हें हाथ पोंछने को तौलिया देती हैं। बच्चे एक–दूसरे की मदद से एप्रेन पहनते हैं। वो कुर्सियों पर बैठते हैं। मेज पर चमचमाती हुई थालियां लगाई जाती हैं। भोजन माताएं भी एप्रेन पहने हैं। वो प्यार व सम्मान के साथ बच्चों को खाना परोसती हैं। बच्चे खाने से पहले प्रार्थना करते हैं। रजनी कहती हैं कि लाइन लगाकर खाना दिया जाना और अपनी बारी का इंतजार करना उन्हें पसंद नहीं। अच्छा, स्वादिष्ट खाना सम्मान के साथ मिलना उनका हक है। ये एप्रेन, ये मेज कुर्सी, ये चमचमाती हुई थालियां, खाने से उठती स्वाद की खुशबू इस सबका कोई अलग बजट नहीं। यह सब उसी सामान्य बजट में होता है जो अन्य स्कूलों को मिलता है। कैसे होता है यह सब...पूछने पर रजनी मुस्कुराती हैं...सब आराम से हो जाता है। खाना खाने के बाद बच्चे अपनी थालियां नल के पास ले जाते हैं

लेकिन धोते नहीं। भोजन माताएं मुस्कुराकर कहती हैं, हमारे बच्चे ही तो हैं ये सब। हमको अच्छा लगता है इनके बर्तन धोना। बात खुद काम करने की आदत की जहां तक है तो वो तो ये बच्चे खूब कर लेते हैं। बच्चे इंटरवल में अलग–अलग खेल खेलने लगते हैं।

खिली–खिली सी आंगनबाड़ी

पास में ही आंगनबाड़ी है। वहां शाकम्भरी देवी और उनकी सहायिका मुन्नी देवी से मुलाकात होती है। नन्हे–नन्हे बच्चे मैडम के साथ सर्दियों की धूप सेंकते नजर आए। एक नन्हे मियां मैडम की गोद से उतरने को तैयार नहीं थे। नन्हे बच्चों को खेल–खेल में दस तक गिनती, गोले बनाना, कविता सिखाने की कोशिश यहां होती है। शाकम्भरी देवी बताती हैं कि 'रजनी मैडम बीच–बीच में आकर हमें बताती रहती हैं कि कैसे बच्चों के साथ खेलते हुए उन्हें सिखाया जा सकता है।'

सांई इतना दीजिए

सप्ताह में एक दिन स्कूल में बाल सभा लगती है। यह पूरी तरह से बच्चों की सभा है। व्यवस्था से लेकर गतिविधि तक। भोजन माताएं व शिक्षक इसमें दर्शक होते हैं। सभी बच्चे अभिनय व बुलंद आवाज के साथ कबीर, रहीम, सूर, तुलसी, मीरा के दोहों में अंताक्षरी खेलते हैं, सुरीली अंताक्षरी। फिर गोल–गोल घेरे में बंटकर अंग्रेजी और हिंदी की कविताओं पर सामूहिक अभिनय होता है। इसके बाद हर बच्चा कुछ न कुछ बाल सभा के सामने बोलता है।

किया ही क्या है जिसका जिक्र करें– रजनी जी को अपने कामों का जिक्र किया जाना पसंद नहीं। वो कहती हैं कि उन्हें नहीं लगता कि उन्होंने ऐसा कुछ किया है जिसका जिक्र किया जाए। जो भी वो करती हैं वो करना उनकी ड्यूटी है और उससे मिलने वाला सुख उनका बोनस। स्कूल में उनकी आत्मा बसती है। उनके बच्चों की जब कोई प्रशंसा करता है तो उनकी आंखों में सुख की कोई बदली जरूर आ बैठती है। उनके स्कूल के

बच्चे अंताक्षरी, समूहगान, सुलेख आदि की राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में विजेता हो चुके हैं। उनके स्कूल में पढ़े बच्चे आगे की पढ़ाई कर रहे हैं कुछ नौकरियों में भी लग चुके हैं और गांव आने पर स्कूल जरूर आते हैं। वो बताती हैं कि शिक्षक के तौर पर हमको अपनी सोच को विस्तार देने की बहुत जरूरत है ताकि शिक्षक के पेशे की गरिमा को संभालते हुए अपने हिस्से की जिम्मेदारियों को ठीक से पूरा किया जा सके। कितने ही प्रशिक्षण हों, डाक्यूमेंट पढ़ा दिए जाएं एक शिक्षक जब तक अपने मन से अपने काम से नहीं जुड़ेगा तब तक कुछ नहीं हो सकता। बच्चों को स्पेस देना, उन्हें गलतियां करते देने की छूट देना, उन्हें बीच में न टोकना उनके विकास का हिस्सा है। कोई बच्चा जब आपसे बहस करे, सवाल करे तो यह बहुत सुंदर अनुभव होता है।

(रजनी नेगी जी की प्रतिभा कटियार से हुई बातचीत पर आधारित)

गीता वर्मा
प्रधानाध्यापिका,
राजकीय प्राथमिक विद्यालय कफलांग
जनपद – चम्पावत

सपनों की मंजिलें

सहायक अध्यापक – ईश्वरी भट्ट, रसियारा
सीआरसीसी – मुकेश वर्मा
शिक्षा मित्र – रेखा बोहरा
भोजनमाता – हीरा रावत एवं राधा रावत
नामांकन – 50

"हमारी इच्छाओं में शामिल हमारी कल्पनाएं हमें कुछ नया कर गुजरने के लिए हमेशा प्रेरित करती हैं, इस नया कर गुजरने के भाव में स्व–प्रेरणा का बड़ा महत्व है जो हमें स्वयं अनुभव कर कुछ नया सृजित करने में मददगार होती है और हम अपने उद्देश्य की ओर योजनाबद्ध तरीके से बढ़ पाते हैं। इस प्रकार प्रयास करते रहने से धीरे–धीरे मनचाही मंजिलें मिल ही जाती हैं। अपने मन के भावों को कुछ यूं बयां करती हैं गीता वर्मा, जो राजकीय प्राथमिक विद्यालय कफलांग में प्रधानाध्यापिका की भूमिका में अपनी सेवाएं विगत 22 वर्षों से निरन्तर दे रही हैं।

1990 के दौरान गीता जी का स्थानान्तरण राजकीय प्राथमिक विद्यालय मझेड़ा से राजकीय प्राथमिक विद्यालय कफलांग में हुआ था। प्राथमिक विद्यालय कफलांग चम्पावत शहर से दक्षिण–पूर्व की ओर स्थित क्रान्तेश्वर नामक खूबसूरत चोटी पर बसा है। यह विद्यालय शहर से लगभग 5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है जिसमें मुख्य सड़क से लगभग 1 किलोमीटर का पैदल मार्ग भी शामिल है। कफलांग विद्यालय के चारों ओर तीन छोटे–छोटे गांव कफलांग, राकड़ व दुधपोखरा आदि हैं जहां के 50 बच्चे आज इस विद्यालय को एक सार्थक पहचान दे रहे हैं। विद्यालय में 2 अध्यापिकाएं है, स्वयं प्रधानाध्यापिका गीता वर्मा एवं सहायक अध्यापिका रेखा बोहरा जी।

नये स्कूल से जुड़ने के भावों को गीता जी कुछ इस तरह व्यक्त करती हैं कि विद्यालय में रसियारा जी और ईश्वरी भट्ट मैडम का साथ मिला जिन्होंने मेरा समय–समय पर काफी सहयोग किया। एक ओर विद्यालय की सुन्दर भौगोलिक छटा, खुली जगह और उसमे बच्चों की खिलखिलाती हंसी मन को मोहती थी तो दूसरी तरफ विद्यालय का पुराना भवन, बच्चों के लिए बैठने को अपर्याप्त जगह, पानी व शौचालय का अभाव, सुरक्षा दीवार के न होने से बरामदे में गोबर या मल का मिलना, विद्यालय का बारात घर के रूप में उपयोग जिससे विद्यालय में गंदगी तथा दीवारों का पान व गुटखे के थूक से सना होना आदि बातें भी चुनौती के रूप में हमारे सामने थीं। समुदाय का विद्यालय व बच्चों के प्रति उदासीन होना जिसका असर बच्चों

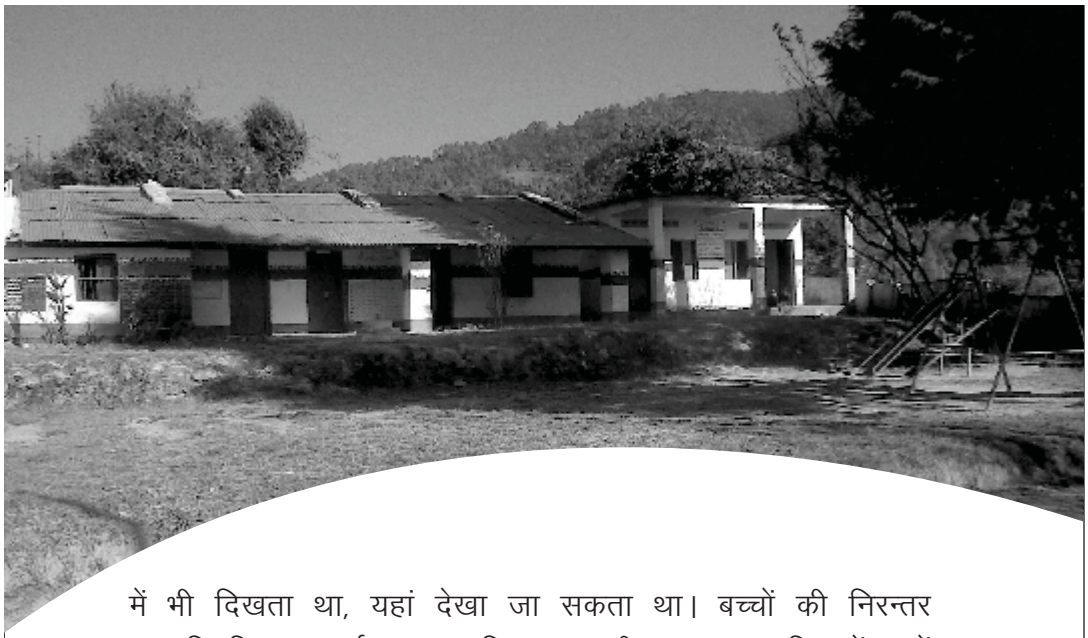

में भी दिखता था, यहां देखा जा सकता था। बच्चों की निरन्तर अनुपस्थिति, गृह कार्य न करना, शिक्षण सामग्री का अभाव आदि बातें बच्चों के सीखने में अवरोध के रूप मे हमारे सामने थी। इन सब समस्याओं का हल निकालना हमारे सामने एक प्रश्न चिह्न था, जिसका हल बिना समुदाय की मदद से संभव नही था तो समुदाय को अपने साथ कैसे लाया जाये? इस बात का हल तो हमारे पास नहीं था लेकिन एक बात मन में आई कि क्यों न इस बारे मे गांव वालों से बातचीत की जाये।

विद्यालय की ओर गांव– विद्यालय की स्थिति–परिस्थितियों से गांव वालों को अवगत कराने के लिए घर–घर जाकर जनसम्पर्क कर उन्हें एकजुट करने का उनका प्रयास रंग लाया और अभिभावकों की मदद से बिना पैसे के विद्यालय के चारों ओर घेर–बाड़ की गई। विद्यालय में पेड़ लगाने व फुलवाड़ी बनाने में भी गांव के लोगों ने मदद की और इस बात का भी लोगों ने भरोसा दिलाया कि अब विद्यालय का उपयोग बारात घर के रूप में नहीं किया जायेगा। किशन सिंह अधिकारी, नाथ सिंह रावत जी तथा गांव के लोगों के सहयोग से विद्यालय में पानी की व्यवस्था व ऊबड़–खाबड़ मैदान को समतल किया गया, जिसमें व्यक्तिगत तौर पर गीता जी ने भी मदद की। सर्व शिक्षा अभियान से धन सहयोग मिलने पर विद्यालय में पक्की सुरक्षा दीवार, शौचालय, किचन व भवन का निर्माण करवाया गया। इस प्रकार समुदाय, विद्यालय व विभाग के आपसी

समन्वयन से विद्यालय की कुछ व्यवस्थागत चुनौतियों तो कम हुई परन्तु अभी बच्चों के सीखने मे आ रही चुनौतियों से हम जूझ रहे थे। बच्चों को सिखाने में अभिभावकों का सहयोग काफी अहम है। बच्चे विद्यालय में क्या सीख रहे हैं, कैसे सीख रहे हैं, क्यों नही सीख पा रहे हैं उन्हें सीखने में क्या दिक्कतें आ रही हैं सीखने के दौरान उनकी जरूरतें क्या हैं तथा सीखने के लिए लगातार विद्यालय जाना जरूरी है आदि महत्वपूर्ण बातों की ओर अभिभावकों का ध्यान हो इसके लिए हमने अपने विद्यालय में मातृ–समूह का गठन किया जिसमें हमारे विद्यालय के लगभग प्रत्येक बच्चे की मातायें जुड़ी हैं और प्रत्येक सदस्य 50 रुपये प्रतिमाह की मासिक अल्पबचत करता है। प्रत्येक माह की अल्पबचत को लॉटरी के माध्यम से जिस सदस्य के नाम की पर्ची निकली उसे दे दिया जाता है। इस प्रकार महिलाएं छोटी सी अल्पबचत के माध्यम से एक–दूसरे की मदद तो करती ही हैं पर इस बहाने वे महीने में एक बार विद्यालय में आ जाती हैं और हम उनसे बच्चों के सीखने सम्बन्धी बातों पर चर्चा कर पाते हैं साथ ही बच्चों, अभिभावकों व हमारा एक जगह पर संवाद हो पाता है। इसका असर हमें बच्चों में देखने को मिला। बच्चों की निरन्तर उपस्थिति, स्वच्छता का स्तर, गृहकार्य का नियमित होना व बच्चों के पास शिक्षण सामग्री की उपलब्धता आदि में हमें मदद मिल रही है। वैसे तो अब बच्चे अनुपस्थित नहीं रहते पर यदि कभी कोई बच्चा दो या तीन दिन से ज्यादा अनुपस्थित रहा तो मैं सीधे उसके घर सम्पर्क पर चली जाती हूं। ऐसा करते रहने पर अब बच्चे समझ गये हैं कि यदि हम स्कूल नहीं गये तो मैडम घर आ जायेंगी इसके बजाय रोज विद्यालय जाना ही ठीक है।

गांव में मजदूरी करने आये एक परिवार के बारे मे जिक्र करते हुए गीता जी बताती हैं कि जब उन्हें पता चला कि विगत छः माह से एक परिवार यहां

आकर बसा है और उनके छः बच्चे (तीन लड़के और तीन लड़कियां) हैं जो विद्यालय नहीं जाते हैं तो हम उस परिवार से मिले और बातचीत करने पर पता चला कि उनमें से तीन बच्चे तो अभी छोटे हैं पर बड़े तीनों बच्चे (दो लड़के और एक लड़की) तो स्कूल आ ही सकते थे। उनकी मां से उन्हें कल से स्कूल भेजने की बात की तो वह बोली ठीक है बहन जी इसके पिताजी से कहूंगी अभी वे घर पर नहीं है। दूसरे दिन पिताजी दोनों बेटों को लेकर स्कूल आ गये। लेकिन सरिता को नहीं लाये, पूछने पर बोले कि घर जंगल में है और छोटे बच्चों को देखने वाला भी चाहिए, इसलिए हम लड़की का नाम नहीं लिखवा सकते। मैंने उन्हें समझाया कि आज लड़का–लड़की समान है तो आपका ऐसा अन्तर करना ठीक नहीं है। बहिन जी बेटी हमारी है हमें उसकी चिन्ता है हम पढ़ायें या न पढ़ायें हमारी मर्जी, तुम्हें इन बच्चों का नाम लिखना है तो लिखो नहीं तो मैं दूसरे स्कूल में लिखवा देता हूं। फिर मैंने बातचीत करना उचित नहीं समझा और बच्चों का नामांकन कर दिया लेकित मन अशांत था कि यदि सरिता स्कूल नहीं आयी तो यह उसके साथ अन्याय होगा।

दूसरे दिन एक बच्चे की तबियत खराब थी और वह स्कूल नहीं आया था तो मैं उनके घर चली गई, सरिता का घर रास्ते में ही था तो सोचा एक बार फिर सरिता के लिए कोशिश की जाय। उस दिन सरिता के माता–पिता दोनों घर पर ही थे। सरिता को स्कूल भेजने की बात करते हुए मुझे थोड़ा झिझक तो हो रही थी पर फिर भी मैंने अपनी बात उनके सामने रखी पर उनसे घर व खर्चे की समस्या का उत्तर मिला तो मैंने कहा कि उसके कॉपी पेन्सिल का खर्च मैं दे दूंगी आप इस बात की चिंता मत करो बस मेरा यह सुझाव मान लो। बहुत समझाने पर दोनों राजी हो गये और सरिता का दाखिला विद्यालय में हो गया। सरिता विद्यालय आई तो पढ़ने लगी और वह कभी स्कूल आती तो कभी नहीं आती पर पढ़ने में उसका मन था। इस तरह उसने कक्षा तीन उत्तीर्ण की और कक्षा चार में आ गई। यहां सरिता अक्सर अनुपस्थित रहने लगी उसके भाइयों से पता चला कि उसकी बहिन की तबीयत खराब होने के कारण वह स्कूल नहीं

आ रही है। एक बार पुनः उनके घर गई तब पता चला कि उसकी छोटी बहिन रेणु के इलाज में लापरवाही की वजह से उसकी दोनों आंखें खराब हो गई है और अब इसकी देखरेख के लिए उसे घर में रहना पड़ता है। उनकी माता से बात की कि अब रेणु और पूजा भी 5 वर्ष की हो गई हैं। तुम दोनों का नाम स्कूल में लिखवा दो यहां उन्हें देखभाल के साथ खाना भी मिलेगा और वे दोनों पढ़ भी सकेंगी और साथ ही सरिता कक्षा 5 की पढ़ाई कर सकेंगी और वह मान गईं। इस प्रकार सरिता व उसकी बहनें रोज स्कूल आने लगीं। सरिता ने खेलकूद, सांस्कृतिक व सुलेख प्रतियोगिता में जनपद व राज्य स्तर पर प्रतिभाग कर स्थान प्राप्त किया। जब सरिता ने कक्षा 5 उत्तीर्ण किया तो आगे उसका दाखिला कक्षा 6 में नहीं किया गया। उसके माता पिता से इस बारे में बात की तो वे वही खर्चे व घर की समस्या बताने लगे। सरिता एक साल घर पर रह गई इस बीच वह अपनी दोनों बहनों को स्कूल लाती थी हमने उसकी पढ़ाई का अभ्यास विद्यालय में जारी रखा। इस बीच मैं राज्य स्तर की टीएलएम प्रतियोगिता हेतु देहरादून गई। इस दौरान हमने एक शाम कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय टनकपुर में विश्राम किया और मुझे यहां की प्रधानाध्यापिका से यहां की प्रवेश प्रक्रिया के संदर्भ में पता चला तभी मैंने सोच लिया था कि सरिता को इस विद्यालय में प्रवेश दिलवाउंगी। प्रवेश शुरू होने पर सरिता के घर वालों से बात की तो पहले वे तैयार नहीं हुए पर फिर समझाने पर मान गये। सरिता कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, टनकपुर में पढ़ने लगी जहां से उसने हाईस्कूल किया और अब वह राजकीय बालिका इंटर कॉलेज चम्पावत में पढ़ रही है।

सरिता की छोटी बहिन रेणु के बारे में बताती हुए वह बोलती हैं कि रेणु बिल्कुल आंख से देख नहीं पाती थी लेकिन वो अंदाज से विद्यालय के कमरों, शौचालय व मध्ह्यान भोजन की जगह पर चली जाती थी और उसके गाने की आवाज भी अच्छी थी। लेकिन हमारे लिए समस्या यह थी कि उसे पढ़ाया कैसे जाय। उसके लिए हमने मिट्टी की गोलियां गिनने के लिए व थर्मोकोल पर उभरे अक्षर बनाये जिससे वह उसे गिनती व अक्षर ज्ञान हो सके लेकिन हम मात्र दो ही शिक्षक थे जिससे हम उसे ज्यादा समय नहीं दे सके और हमें इसमें विशेष सफलता नहीं मिली। रेणु का उत्साह व रुचि

देखकर लगता था कि यह बच्ची काफी होनहार हैं। हम उसे विद्यालय की प्रत्येक गतिविधि में प्रतिभाग करवाते थे जिससे वह अपने आप को अलग न समझे। विशेष आवश्यकता वाले बच्चे की कला व कविता प्रतियोगिता में रेणु ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। उसे अब विद्यालय मे बहुत अच्छा लगता था। वह बारिश के दिन भी अपनी मां से स्कूल आने की जिद करती थी। यहां मैं अपने शिक्षा विभाग और विशेषकर अपने सी.आर.सी. महोदय श्री मुकेश वर्मा जी को विशेष धन्यवाद देना चाहूंगी जिनके प्रयासों से रेणु अब देहरादून में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के स्कूल में पढ़ रही है।

विद्यालय में सीखना-सिखाना- बच्चों के सन्दर्भ में गीता जी का मानना है कि बच्चे कभी गलत नहीं होते। उन्हें हम जैसा माहौल देंगे वे वैसा ढल जाते हैं बशर्ते हमारे प्रयास सही हों। वे कहती हैं कि विद्यालय में बच्चों का निरन्तर ठहराव करवाने में अभिभावकों का सहयोग सराहनीय है तो अब बच्चों को सीखने में आनन्द आये उन्हें अपना विद्यालय अच्छा लगे और वे सीखने के प्रति उन्मुख हो सके आदि बातों का सम्बन्ध तो विद्यालय के माहौल व शिक्षण गतिविधियों पर निर्भर करता है। इस कार्य की धुरी हम शिक्षक ही हैं। बच्चों को मैत्रीपूर्ण वातावरण में ही मजा आ सकता है जहां उन्हें कोई डर न हो और वे अपनी बात को बोल सकें। हमने इस बात का पूरा ध्यान रखा और हमें खुशी है कि इस बारे में हमने अपने बच्चों का विश्वास जीता है। हमने बच्चों से लगातार संवाद कर विद्यालयी गतिविधियों में उनकी प्रतिभागिता को बढ़ावा दिया, उनसे दोस्ताना सम्बन्ध बनाने की कोशिश की और आज हम देखते हैं कि हमारे बच्चे निडर हैं, वे अपनी बात को बेझिझक दूसरों के सामने रख पाते हैं और उन्हें अपने विद्यालय रोज आना पसंद है।

विश्वास के सन्दर्भ में अपने भावों को बताते हुए वह बोलती हैं कि एक

शिक्षक का एकमात्र कार्य शिक्षण ही नहीं है अपितु बच्चों का विश्वास उनका प्यार–प्रेम पाना भी एक शिक्षक के लिए बड़ी गौरवपूर्ण बात है। हमारा अपना भी व्यक्तिगत जीवन होता है और बहुत सारे विभागीय कार्य भी होते हैं जिनके लिए हमें विद्यालय से बाहर जाना होता है जैसे आज स्कूल आये और हो सकता है कि दोपहर बाद बी.एल.ओ. या बैंक के कार्य से या किसी अन्य आवश्यक कार्य से बाहर जाना पड़ सकता है तो ऐसी स्थिति में, मैं हमेशा बच्चों को बताकर जाती हूं। मैने यह बात महसूस की कि जब मैं उन्हें बिना बताये स्कूल से चली जाती तो उन्हे यह अच्छा नहीं लगता था और वे भी मुझसे अपनी बातें छिपाते थे जो मुझे कभी दूसरों से पता चलती थीं तब मैंने समझा कि बच्चों का विश्वास जीतना एकतरफा बात नहीं है और मैंने बच्चों से अपने बारे मे जरूरी अनुभव उनसे साझा किये तो मैंने उन्हें अपने काफी नजदीक पाया और इसका फायदा मुझे शिक्षण में भी मिला।

बच्चे आजादी पंसद करते हैं और हम बड़े भी तो आजाद रहना चाहते हैं। वह बताती हैं कि मैंने महसूस किया कि अपनी तो मन के मुताबिक और बच्चों पर अंकुश हम बड़ों की फितरत है। बच्चों के लिए ऐसा न करो, यहां आओ वहां जाओ, इसे यहां रखो, विद्यालय समय पर आओ आदि–आदि। पर क्या हम बच्चों को भी ऐसी आजादी दे सकते हैं कि यही प्रश्न वे हमसे भी पूछ सकें। बच्चों से देरी में आने का कारण तो मैं पूछ लेती थी पर यदा कदा जब मैं देर से विद्यालय आती हूं तो क्या बच्चों को आजादी है कि वे मेरे देरी से आने का कारण जान सकें? और मैंने शुरुआत की उन्हें बताने की और आज उन्हें मुझे पूछने की आजादी है। ऐसा करके मैंने देखा और पाया कि यह आजादी बच्चों को निडर बनाने में और उन्हें स्व–अनुशासन में रहने के लिए प्रेरित जरूर करती है। बस हमें थोड़ा धैर्य रखना होता है।

बच्चों का लगातार स्कूल न आना, किताब–कॉपी पेन्सिल आदि का न होना, गृहकार्य न करना, हम शिक्षक कम थे तो कॉमन क्लासरूम होना तथा बच्चों का पढ़ने–लिखने में गलती करना आदि बहुत सारी समस्याएं हमारे बच्चों में भी थी और हैं भी परन्तु कुछ प्रयासों से ये अब कम हो गई है। अभिभावकों ने ध्यान दिया तो बच्चे अब रोज स्कूल आ रहे हैं। अब उनके पास शिक्षण सामग्री भी होती है। जो स्कूल में आज पढ़ाया वही हम गृहकार्य देते हैं और लगभग सभी बच्चे अपना गृहकार्य करके लाने लगे हैं जो करके नहीं लाते उन्हें हम विद्यालय में करवाते हैं, ऐसा करने से अब बच्चे समझने लगे हैं कि अगर गृहकार्य करके नहीं ले गये तो स्कूल में तो करना ही पड़ेगा। पढ़ने–लिखने में गलती करना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है इसे अभ्यास से सुधारा जा सकता है और इसके लिए हम बच्चों को पढ़ने–लिखने के खूब अवसर किताब, कॉपी व श्यामपट्ट पर देते हैं। जिससे बच्चे एक दूसरे के द्वारा किये गये सही–गलत से ज्यादा समझते हैं और उन्हें सही–गलत का अन्तर ठीक से समझ में आ जाता है। हम बच्चों से अपने अनुभव लिखने को कहते हैं जिसे वे बड़े चाव से लिखते हैं व एक दूसरे को सही भी करते हैं।

हमारी कक्षाओं में कॉमन क्लासरूम बैठक व्यवस्था है और बहुत बार हमें एक कक्षा के बच्चों को किसी अवधारणा पर समझ बनाने हेतु अलग कक्षा कक्ष अभ्यास की आवश्यकता महसूस होती है तो इसके लिए हमने विद्यालय में एक आउटडोर एक्टीविटी कॉर्नर बना रखा है। यह कार्नर एक शौचालय की दीवार का उपयोग करके उस पर एक चबूतरा व बच्चों के लिए बैठने हेतु कंक्रीट के मोड़े बनाये गये हैं। यहां हम सैपरेट क्लास एक्टीविटी द्वारा बच्चों को सिखाने का प्रयास करते हैं।

टीएलएम के बारे में गीता जी कहती हैं कि टीएलएम के बिना मैं शिक्षण को अधूरा मानती हूं। टीएलएम से बच्चे ज्यादा समझते हैं और विभिन्न अवधारणाओं को गहराई से महसूस करते हैं। इस बात को वह एक उदाहरण से समझाने का प्रयास करती है जैसे हमारे पहाड़ के बच्चों के लिए रेलगाड़ी एक नई अवधारणा है जिसे उन्होंने कभी नहीं देखा है। इसे

दो तरीकों से बच्चों को समझाया जा सकता है एक तो रेलगाड़ी का चित्र दिखाकर उसके बारे में बच्चों को बताना और दूसरा हम एक प्रयोग करके रेलगाड़ी जैसा कुछ बनाने का प्रयास बच्चों की मदद से कर सकते हैं। जैसे खाली माचिस के बहुत सारे बॉक्स लें और उन्हें धागे या पिन की सहायता से रेल के डिब्बों की भांति जोड़ लें और पहले वाले बॉक्स को इंजन बनाने के लिए उसमें धूप जलाकर रखें और धागे की सहायता से धीरे–धीरे रेल के इंजन की आवाज निकालते हुए खींचे। यह बच्चों को अपने द्वारा बनाई हुई रेलगाड़ी लगेगी और वे रेलगाड़ी के बारे में वे सार्थक चर्चा कर सकेंगे। उनका ध्यान शिक्षण में लगेगा और उन्हें इसमें मजा भी आयेगा। हमने इसी तरह के बहुत सारी शिक्षण अधिगम सामग्री बच्चों के सीखने के लिए बना रखी है। जिसमें टाट–पट्टी पर ऊन से भारत का नक्शा, ज्ञान वृक्ष, रेलगाड़ी, पानी छानने की विधि, मानव शरीर के अंग, मानव कंकाल, व्याकरण एलबम, स्टोरी कार्ड, शब्द कार्ड–विलोम, पर्यायवाची व समानार्थी, शब्द अंताक्षरी, शतरंज से जोड़ गुणा, घटाना व भाग आदि। हमारे साथ शिक्षक प्रेरक त्रिलोक जी व आंगनवाड़ी सेविका श्रीमती गोबिन्दी जोशी का सहयोग काफी सराहनीय है वे बच्चों को सिखाने में अपना सहयोग हमें निरन्तर देते रहते हैं। यहां वे एक मजेदार बात बताती है कि त्रिलोक जी व सहायक अध्यापिका रेखा जी इसी विद्यालय से पढ़े हैं और उनके शिष्य रहे हैं। इन दोनों का सहयोग विद्यालय के लिए सराहनीय है रेखा जी की हैंडराइटिंग की तारीफ करते हुए बताती हैं कि उनका हस्तलेख काफी अच्छा है और वह इसको लेकर बच्चों के साथ काफी अभ्यास करती हैं जिसका फायदा बच्चों को मिल रहा है। दोनों भोजनमाताओं का विद्यालय के प्रति समर्पण स्वागतयोग्य है। ये दोनों विद्यालय की फुलवाड़ी का रख–रखाव, किचन गार्डन में सब्जियों व दालों के उत्पादन में तथा भोजन व्यवस्था कुशलता से करती हैं।

नोट– गीता वर्मा जी को उनके प्रयासों के लिए राष्ट्रपति पुरस्कार मिल चुका है।

(गीता वर्मा जी से हुई विजय आनन्द नौटियाल की बातचीत पर आधारित)

संजय कुकसाल
प्रधानाध्यापक
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
गढ़वाल गाड़, चिन्यालीसौड़
जनपद – उत्तरकाशी

मिलजुलकर निकाली राह

सहायक अध्यापक – कोमल सिंह चौहान एवं सुमित्रा पंवार
सीआरसीसी – ओमप्रकाश रावत
भोजनमाता – गंगा देवी एवं चंदा देवी
नामांकन – 52

शिक्षा जगत में अक्सर यह बात सुनने में आती है कि पिछले कुछ दशकों में सरकारी शिक्षा व्यवस्था में काफी बदलाव देखने को मिल रहे हैं। ज्यादातर इस तरह की चर्चा के कुछ मुख्य बिंदु इस प्रकार होते हैं... "अब सरकारी विद्यालयों में कुछ खास आर्थिक एवं सामजिक वर्ग के बच्चे ही पढ़ते हैं, अध्यापक अब पहले की तरह समर्पित भाव से शिक्षण कार्यों का निर्वहन करने में असमर्थ हैं, अध्यापकों को अब पहले की तुलना में वेतन अधिक लेकिन समाज से सहयोग कम मिल पा रहा है। अब कोई बिरला अध्यापक ही अब विद्यालय में अपना डेरा डाल कर रहता है" इत्यादि। कई बार चर्चा के बिन्दुओं का कोई अंत ही नज़र नहीं आता है। लेकिन सच तो यह है कि केवल विद्यालयी शिक्षा ही नहीं बदली है बल्कि बदलाव तो हर क्षेत्र में देखा जा सकता है तो फिर शिक्षा का क्षेत्र भी कैसे अछूता रहता।

इन सभी बदलावों के बावजूद आज अनेकों शिक्षक ऐसे हैं जो विषम परिस्थितियों से लोहा लेते हुए, बदलते हुए परिदृश्य में स्वयं को संभाले हुए और आधुनिकता की सुविधाओं में बहने से बचते हुए लगातार सरकारी शिक्षा व्यवस्था में समाज का विश्वास जगाने का कार्य कर रहे हैं। इन्हीं शिक्षकों में से एक है श्री संजय कुकसाल।

संजय कुकसाल का परिचय किसी भी साधारण इंसान की तरह है लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान उन्हें कुछ खास बनाते हैं। उनके इस योगदान के बारे में विस्तृत जानकारी देने से पहले उनका संक्षिप्त परिचय भी जरूरी है। 4 फरवरी 1973 को जन्म हुआ और शिक्षा के क्षेत्र में जुड़ने से पहले उन्होंने, अर्थशास्त्र में स्नातकोतर एवं बीएड की डिग्री हासिल की। संजय जी की मानें तो उनकी रुचि केवल पढ़ने एवं पढ़ाने तक ही सीमित है।

कुछ समय पहले मेरा उनसे परिचय, उत्तरकाशी के चिन्यालीसौड़ ब्लॉक के दूरस्थ एवं दुर्गम प्राइमरी विद्यालय गढ़वाल गाड़ में हुआ। इस विद्यालय के बारे में विस्तार से बात करने से पहले इससे पहले उनके द्वारा

अन्य विद्यालयों में दी गयी सेवा का जिक्र करना भी आवश्यक है।

उनकी प्रथम नियुक्ति 1 अप्रैल 1995 को नौगांव ब्लॉक के कुर्सिल प्राइमरी स्कूल में हुई। उस समय यह विद्यालय सड़क मार्ग से 10 किलोमीटर दूर था। कुकसाल जी ने इस विद्यालय में 4 वर्ष तक शिक्षण का कार्य करने के बाद चिन्यालीसौड़ ब्लॉक में एक अन्य दूरस्थ के संकुल जिव्या में 3 वर्षों तक शिक्षण कार्य किया। इसके बाद वे 12 वर्षों तक एक अन्य दूरस्थ विद्यालय में कार्य करते रहे और वर्तमान विद्यालय में पिछले 2 वर्षों से सेवा दे रहे हैं।

उनकी उपलब्धि केवल दुर्गम विद्यालयों में शिक्षण कार्य करना ही नहीं है बल्कि वे जिस जगह भी रहे उसी स्कूल को अपना निवास स्थान बनाकर रहे और पूरे तन, मन, धन से बच्चों को बेहतर शिक्षा देने का प्रयास किया। 2007 में प्राइमरी स्कूल खालसी को सर्वश्रेष्ठ विद्यालय का अवार्ड मिला तो 2008 में इसी विद्यालय में कुकसाल जी को सर्वश्रेष्ठ अध्यापक के रूप में सम्मानित किया गया। समुदाय के साथ उनके हमेशा बेहतर रिश्ते रहे और इसका मुख्य कारण वे उनका उसी गांव में डेरा डालकर रहने को बताते हैं। गांव में ही रहने से वे सभी बच्चों को बहुत करीब से जानते हैं जिससे उन्हें शिक्षण कार्यों में भी मदद मिलती है। उनको और करीब से जानने के लिए मैं भी उनके साथ 3 दिन तक उनके विद्यालय में रहा। उनके समर्पण, संवेदनशीलता और शिक्षा के प्रति उनकी कर्तव्यनिष्ठा को जानने के लिए यह समय काफी था और विद्यालय का वातावरण, बच्चों की मुस्कुराहट और समाज का उनमें विश्वास इस बात का सबूत था। उनके इस विद्यालय के बारे में जानना उनको करीब से जानने के लिए जरूरी है।

इस विद्यालय में अक्सर किसी का आना जाना नहीं होता क्योंकि एक डेढ़ घंटे की पहाड़ी चढ़ाई करने के बाद ही यहां पहुंचा जा सकता है। प्राइमरी स्कूल गढ़वाल गाड़ में कुल 52 छात्र–छात्राएं हैं और कुकसाल जी यहां पर दो अन्य शिक्षकों के साथ सीखने–सिखाने का कार्य कर रहे हैं। अगर शिक्षण कार्यों का गहराई से अवलोकन करें तो पाएंगे कि कुकसाल जी

बाल मनोविज्ञान से भली–भांति परिचित हैं और बच्चे कैसे सीखते हैं इस पर वे बहुत ही गहनता से कार्य करते हैं। अगर उनका विद्यालय देखेंगे तो वहां का वातावरण भाषा सीखने के लिए समृद्ध है और स्कूल की दीवारों का प्रयोग सीखने–सिखाने के लिए किया गया है। गणित और अंग्रेजी पढ़ाने के लिए टीएलएम का एवं फ्लैश कार्ड का प्रयोग किया जाता है। वे अपनी कक्षा में आसपास के वातावरण व गांव के परिवेश से जुड़े उदाहरण द्वारा शिक्षण कार्य करते हैं।

अन्य दो अध्यापकों के साथ उनका समन्वय बहुत ही अच्छा है और तीनों मिलकर विद्यालय को नेतृत्व प्रदान कर रहे हैं। कुकसाल जी किसी भी प्रकार से अपने हेड होने के कारण कोई फर्क नहीं महसूस करते। यही कारण है कि अन्य दो अध्यापक भी पूरी लगन से बच्चों को पढ़ाने के कार्य में लगे हैं। पढ़ाई के साथ–साथ इस विद्यालय के बच्चे खेल–कूद में भी आगे हैं और साल दर साल ब्लॉक एवं जिला स्तर की प्रतियोगिता में मेडल जीतकर लाते हैं।

गांव के लोगों से बात करने से पता चला कि समुदाय के लोग भी कुकसाल जी से बहुत संतुष्ट हैं और गांव के बच्चे स्कूल के समय के बाद भी उनसे पढ़ते हैं। कुकसाल जी का मानना है कि गांव में ही रहने से उनका समाज के साथ अच्छा सम्बन्ध बन पाया है क्योंकि वे समय–समय पर सुख–दुःख में एक–दूसरे के साथ रहते हैं। सुबह–सुबह जागने पर देखा कि कुकसाल जी बच्चों के मिड–डे माल के लिए चने गर्म पानी में भिगो रहे हैं ताकि वे अच्छे से पक जाएं और भोजनमाता को भी परेशानी न हो। आप उनको स्कूल के मैदान से पत्थर साफ करते, बच्चों की टूटी हुई चप्पलों को सिलते हुए या किसी अन्य रूप में उनकी संवेदनशीलता से रू–ब–रू हो सकते हैं। दुर्गम विद्यालय होते हुए भी इस विद्यालय में सभी भौतिक सुविधाएं मौजूद हैं जैसे कि मिड–डे–मील के लिए गैस की व्यवस्था, प्रार्थना सभा के लिए साउंड सिस्टम और बच्चों के बैठने के लिए कारपेट की व्यवस्था इत्यादि। कुकसाल जी ने समाज के सहयोग से बच्चों को दो सेट ट्रैक सूट भी उपलब्ध करवाए हैं।

उनसे मिलकर आप स्वयं को भी ऊर्जावान महसूस करेंगे और आपको यह विश्वास होगा कि इस विद्यालय के बच्चों का भविष्य सुरक्षित हाथों में है। इस प्रकार संजय कुकसाल जी सरकारी शिक्षा तंत्र में एक उम्मीद जागते शिक्षक हैं, इसी प्रकार के व्यक्तित्व में हमारी शिक्षा व्यवस्था का चमकदार भविष्य नज़र आता है।

(संजय कुकसाल जी की संजीव शर्मा से हुई बातचीत पर आधारित)

कुसुमलता
प्रधानाध्यापिका
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
अजबपुरकला–1
जनपद – देहरादून

सृजन की नई–नई खिड़कियां खुलती हैं यहां...

सहायक अध्यापक – अनुपमा डोभाल, उर्मिला गुसांई
सुनीता असवाल, नीलम नेगी
सीआरसीसी – नरेश प्रसाद रतूड़ी
भोजनमाता – दीपमाला सोनी एवं सीमा
नामांकन – 121

राजकीय प्राथमिक विद्यालय अजबपुरकला–1' का माहौल इतना उन्मुक्त है और बच्चों का आत्मविश्वास इस कदर छलकता है कि बच्चों को आप क्लासरूम में या क्लास के बाहर भी मजे से नाचते–गाते, गीत बनाते देख सकते हैं। किताबों में दर्ज कविताओं पर धुन बनाकर उसे गाते हुए ढफली और ढोलक की थाप पर बच्चों को नृत्य करते हुए आसानी से देखा जा सकता है। ये बच्चे अपने भीतर की तमाम सृजनात्मकता बिखेरने को व्याकुल नज़र आते हैं।

इस विद्यालय की प्रधानाध्यापिका कुसुमलता बताती हैं कि 'वो चिलचिलाती गर्मियों के दिन थे। मैं चौराहे पर सिग्नल हरे होने का इंतजार कर रही थी। तभी कुछ बच्चों का जत्था मेरी गाड़ी घेर लेता है। वो मुझसे कुछ मांग रहे थे...यूं तो वो भीख मांग रहे थे लेकिन मुझे जाने क्यों लगता है कि भीख मांगना कुछ नहीं होता असल में वो हमसे मदद मांग रहे होते हैं। मेरा मन उदास हो गया। कुछ दिन बाद वो बच्चे फिर नजर आते हैं। अब मैं उदास मन लेकर वापस घर जाने वाली नहीं थी। मैं गाड़ी से उतरकर उनके पास जाती हूं। उनके बारे में पूछताछ करती हूं। उनके परिवार वालों से मिलती हूं। उन्हें अपने स्कूल अजबपुरकला–1 में ले आती हूं। ये सपेरा बस्ती के बच्चे हैं। इन्हें नहलाना, धुलाना, बाल बनाना, कुछ के बाल तो इतने उलझे कि उन्हें काटकर ही कंघा अंदर जा सकता था। तो खुद कैंची उठाकर बच्चों के बाल काटना...और यह सब करते हुए अपने भीतर थोड़ी तसल्ली महसूस हुई। लेकिन यह चुनौती यहीं समाप्त नहीं हुई। बाहर घूमने वाले बच्चों को अनुशासित होकर क्लास में बैठना भला कैसे अच्छा लगता। कुछ दिन में वो फिर स्कूल से गायब होकर। सड़कों पर भीख मांगते नज़र आते। उन्हें फिर स्कूल तक लेकर आती।' कुसमलता जी यह बताते हुए लगातार मुस्कुराती रहती हैं। वो कहती हैं कि कई बार तो बच्चे हमसे नाराज हो जाते थे और घर से बस्ते में सांप लेकर आते और क्लास में छोड़ देते ताकि हम उन्हें स्कूल में न रोकें। यह बताते हुए वो लगातार हंस रही थीं। लेकिन ज्यादा समय नहीं लगा बच्चों का मन स्कूल में रमाने में। अब ये सब रोज स्कूल आना चाहते

हैं...वो आसपास उन्हें घेरे खड़े बच्चों को प्यार से देखती हैं।

उनका ऑफिस कुछ अलग है। बच्चों के उपयोग की चीजें, उनके हाथों से बनी कलाकृतियां, किताबें, पोस्टर यहां सजे नहीं हैं, रखे हैं...कि कभी भी कोई भी बच्चा उन्हें सहज ही उठा सके, इस्तेमाल कर सके।

कुसुमलता जी गर्व से यह बताती हैं कि यहां से पढ़ने वाले बच्चों के स्कूल या पढ़ाई छोड़ने की वाले बच्चों की दर काफी कम। वे बताती हैं कि उनके स्कूल के अधिकांश बच्चे दसवीं, बारहवीं, स्नातक तक की पढ़ाई पूरी करते हैं। ये बच्चे आज भी अपने प्राथमिक स्कूल के संपर्क में हैं और स्कूल के कार्यक्रमों में आते रहते हैं। आसपास सघनता से बने घरों और दुकानों के बीच यह स्कूल एकदम अलग सा दिखता है। इस स्कूल में 7 कमरे, 1 किचन शेड और खेल का मैदान है। यहां प्रार्थनायें, खेल और व्यायाम के लिए पर्याप्त जगह है। इस मैदान में बच्चों के लिए खेल व अन्य सामूहिक गतिविधियों का आयोजन होता रहता है। इस स्कूल के कई बच्चे खेल की प्रतियोगिताओं में ब्लॉक, जिले व राज्य स्तर तक जा चुके हैं। कुछ बच्चों ने राज्य स्तर पर पुरस्कार भी जीते हैं। मजे की बात है कि इस स्कूल के बच्चे न सिर्फ शारीरिक गतिविधियों में अच्छा करते हैं बल्कि पढ़ने–लिखने, कविता, गीत, नाटक आदि में भी बढ़–चढ़कर हिस्सा लेते हैं।

कुसुमलता जी अपनी टीम के सहयोग से एक अकादमिक वर्ष में विभिन्न प्रकार के खेल, बाल मेला, कविता, कहानी लेखन, अन्ताक्षरी, बस्ता दिवस, सुलेख अभ्यास, मेंहदी प्रतियोगिता, राखी प्रतियोगिता, बागवानी, क्यारी निर्माण, नाटक प्रतियोगिता आदि का आयोजन करती हैं जिसमें स्कूल के सभी बच्चे प्रतिभाग करते हैं। इस तरह की गतिविधियों से स्कूल का माहौल खुशनुमा बना रहता है। हालांकि वे इसे काफी शिक्षाप्रद भी बताती हैं जिसमें बच्चे जिम्मेदारी लेना, योजनाएं बनाना, समूह कार्य, सृजनात्मक

लेखन, संवाद आदि सीखते हैं।

इस तरह के प्रयासों की वजह से छात्र और अभिभावक दोनों ही स्कूल को पसंद करते हैं। उनके स्कूल में कुछ बच्चे तो प्राइवेट स्कूल छोड़कर भी पढ़ने आते हैं जबकि कई बच्चों को काफी प्रोत्साहित करके स्कूल लाना पड़ता है। कुसुमलता जी व अन्य शिक्षिकाएं समुदाय में जाकर बच्चों को लाती हैं। फिर इन बच्चों को उनकी आयु, सीखने के स्तर और रुचि के अनुरूप स्कूल और कक्षा की प्रक्रियाओं में शामिल किया जाता है। इस तरह के प्रयास को याद करते हुए उन्होंने कुछ बच्चों का जिक्र किया जो अपने परिवार के व्यवसाय सब्जी, निम्बू मिर्ची बेचना आदि की वजह से स्कूल नहीं आ पाते थे। उनके माता–पिता से काफी बातचीत करने के बाद ये बच्चे स्कूल आने लगे। धीरे–धीरे इनमें से अधिकांश बच्चे स्कूल में रम गए और स्कूल की गतिविधियों में शामिल होने लगे। आज इनमें से कई बच्चे अपने बस्ती के बाकी बच्चों के स्कूल आने का कारण हैं।

छोटे बच्चों की दुनिया में सरलता और सृजन का महत्व

कुसुमलता जी का कहना है कि सृजनात्मक शिक्षण प्राथमिक शाला के लिए विशेष स्थान रखता है। उन्होंने छोटे बच्चों के साथ काम करते हुए यह पाया कि कक्षा 1 के स्तर के बच्चे नाचने, गाने, खेल, कविता, कहानी, कला, क्राफ्ट मॉडल आदि के माध्यम से आराम से सीखते हैं। इस तरह के संसाधनों को इकट्ठा करने और बनाने के लिए उन्होंने स्कूल स्तर और समुदाय स्तर पर प्रयास किये। इस प्रक्रिया में बच्चों ने सृजनात्मक कार्य में भाग लिया और शिक्षक और समुदाय ने स्कूल के लिए पुस्तकें और स्टेशनरी इकट्ठा की। कुसुमलता जी ने भी बच्चों के लिए छोटी–छोटी कहानियां और कवितायें लिखीं। आज उनके पास कहानियों, कविताओं, चित्र और क्राफ्ट की सामग्री का भण्डार है। उनका ऑफिस भी

सीखने–सिखाने के संसाधनों से भरा हुआ है। इन सबका इस्तेमाल स्कूल की सजावट और कक्षा–शिक्षण में होता है।

उनके अनुसार जिस प्रकार बच्चा अपने परिवेश की कई बातों से जुड़कर सीखता–समझता है वैसा ही वो स्कूल में भी कर सकता है। वे विशेष ध्यान देती हैं कि बच्चे अपने मन की बात को कह पाएं इससे न सिर्फ अभिव्यक्ति निखरती है बल्कि बच्चे की अवलोकन क्षमताएं सोचने–विचारने, तर्क करने जैसी क्षमताओं में भी सुधार आता है। उनकी कक्षा में कहानी और कविता सुनाने–पढ़ने के दौरान हुयी बातचीत उनके इस विचार की पुष्टि करते हैं। जिसमें अधिकांश बच्चे अपने अनुभव और प्रश्न उनसे साझा करते हैं। कुसुमलता जी बच्चों से छोटी–छोटी और अत्यधिक सरल बातें करती हैं। उनके बात करने का लहजा ही ऐसा होता है कि बच्चों को सोचने का और अपनी तरफ से से कोई बात कहने का मन होता है। छोटे–छोटे बच्चे भी निर्भीक होकर उनसे अपनी बात कहते हैं और अपने द्वारा किया गया काम उन्हें दिखाते हैं। इसके साथ ही शुरुआती कक्षा में बच्चा कला, क्राफ्ट, प्रार्थना सभा की प्रक्रियाएं जैसे समाचार बोलना आदि में भाग लेता है। फिर बच्चों की स्वतः ही पढ़ने–लिखने के काम में भी रुचि होने लगती है।

स्कूल की प्रक्रियायों को मजबूत करना

वे प्रत्येक बच्चे को व्यक्तिगत तौर पर जानती हैं तथा निरंतर अंतराल पर सबसे बात करती रहती हैं। कुसुमलता जी स्कूल के सभी बच्चों को नाम से बुलाती हैं। उन्हें उनकी खूबियों और कमियों का अहसास है जिसे वे नोटबुक में लिखती रहती हैं। वे बच्चे के अकादमिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों का रिकॉर्ड रखती हैं। स्कूल में प्रत्येक बच्चे के लिए एक बॉक्स फाइल है जिसमें उनके द्वारा रचित कहानियां, कविता, लेख, चित्र, गणित, पर्यावरण शिक्षण आदि के काम संग्रहित किये जाते हैं। स्कूल की विभिन्न प्रक्रियाओं से स्वयं जुड़ने पर बच्चे को कोई उपदेश देने की जगह वो उन्हें सीखने और करने के नए मौके देती हैं। उनका मानना है कि बच्चे को स्वयं यह पता नहीं होता कि वो कितना आगे जा सकता है। बच्चों को नित नए अनुभव कराने के लिए वे स्कूल की प्रक्रियाओं को काफी असरदार

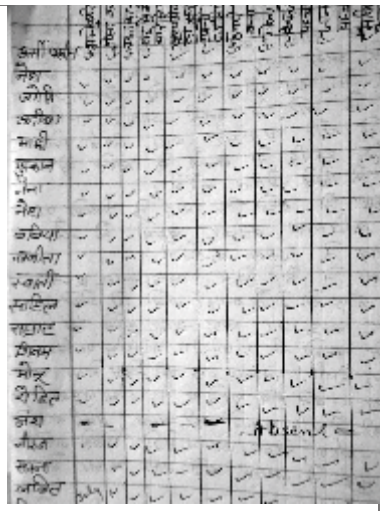

मानती हैं क्योंकि इसमें बच्चा विभिन्न प्रकार की जिम्मेदारियों और चुनौतियों का अहसास करता है। स्कूल में हो रहे विभिन्न कार्यक्रमों में वे सबके प्रतिभाग के बारे में सोचती हैं ताकि स्कूल की गतिविधियों में भाग लेकर बच्चा, सहभागिता और समानता का अनुभव करें। वे यह सुनिश्चित करती हैं कि बच्चा स्कूल की अधिकांश प्रक्रियाओं में प्रतिभाग करे। इस स्कूल में सुबह की प्रार्थना से लेकर मध्याहन भोजन, कक्षा शिक्षण, बागवानी, साफ–सफाई आदि कार्यों में सबकी जिम्मेदारियां बंटी हुयी हैं। इनमें से ज्यादातर कार्य बच्चे स्वतः ही कर लेते हैं। कई बार तो यह यकीन भी नहीं होता कि कोई व्यवस्था बनाई गयी है। न तो बच्चों के चेहरे पर किसी नियम के पालन का कष्ट दिखता है और न ही कोई उनके पीछे निर्देश और संचालन का बोझ लिए खड़ा मिलता है। ऐसा लगता है कि सब कुछ स्वचालित तरीके से हो रहा है। प्रार्थना सभा की प्रक्रिया में अक्सर ऐसा होता है कि जिन बच्चों को प्रार्थनाए गीत, कविता, विचार आदि बोलना आ जाता है वो नेतृत्व करने के लिए तत्पर रहते हैं। यहां भी उन्होंने सभी के प्रतिभाग का ध्यान रखा है। स्कूल में उन्होंने बच्चों के समूह बनाये हैं और हर समूह को बारी–बारी से प्रस्तुति देनी होती है। समय–समय पर बच्चों द्वारा हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में नाटक भी तैयार किया जाता है। बच्चे शिक्षिका के मार्गदर्शन और सामूहिक चर्चा द्वारा चयनित पाठ के विषय का नाटक में रूपांतरण करते हैं। अंग्रेजी में करवाए जाने वाले ज्यादातर नाटक उनकी पुस्तक से ही होते हैं जिसकी विषयवस्तु का उन्हें पता होता है। अब तक इस स्कूल के नाट्य समूहों ने स्कूल के अन्दर और बाहर खूब सराहना पाई है। अब जब बच्चे अपनी पाठ्य पुस्तक के कुछ नाटक कर चुके हैं तो बाहर की पुस्तक का भी एक नाटक तैयार किया गया है। कुसुमलता जी ने बच्चों के काम को स्थानीय अखबारों और पत्रिकाओं में भेजा। अब तक इन बच्चों की कई कहानियां विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में छप चुकी हैं।

इस स्कूल में बिताया गया समय न सिर्फ शिक्षाप्रद बल्कि काफी मनोरंजक भी रहा है। इस स्कूल को समझने और बच्चों की सफलता को जानने पर लगा कि यहां आने वाले बच्चे सिर्फ एक स्कूल में शामिल नहीं होते बल्कि एक उत्सव में शामिल होते हैं। यह एक ऐसा उत्सव है जो बच्चों के इस स्कूल से जाने के बाद भी उनके अन्दर चलता रहता है।

(कुसुमलता जी की रॉबिन पुष्प से हुई बातचीत पर आधारित)

धीरज खडायत
सहायक अध्यापक
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
तोलिखवा कोट, ब्लॉक–कनालीछिना
जनपद – पिथौरागढ़

जादू वाले सर आ गए...

सहायक अध्यापक – प्रकाश चन्द्र उपाध्याय
सीआरसीसी – एन.डी. पंत
भोजनमाता – नन्दा देवी
नामांकन – 17

'बल क्या है...' के प्रश्न पर एक बालक का उसके अध्यापक ने इस तरह से मजाक बनाया कि एक पल के लिए उसे विज्ञान विषय से नफरत होने लगी। आखिर वो क्या करता, उसे विज्ञान की परिभाषायें, शब्दावली और सिद्धांत याद नहीं होते थे। वो तो बस अपने चारों ओर होने वाली घटनाओं में ही मन लगाता था। जब उन्हीं से सम्बंधित प्रश्न अपने अध्यापक से पूछता कि ऐसा क्यों होता है तो उसे कक्षा के सामने मूर्ख घोषित कर दिया जाता। एक बार को विज्ञान कहीं छूट ही जाता पर 'विज्ञान जैसा विषय मूर्खों के लिए नहीं होता है' जैसे कथन ने उस बालक को आत्मबल दिया और उसने विज्ञान अध्यापक बनने का निश्चय किया।

आज वह बालक धीरेन्द्र खडायत अपने क्षेत्र में न सिर्फ विज्ञान का शिक्षक है बल्कि अपने क्षेत्र के बच्चो में "जादूगर सर" के नाम से भी प्रसिद्ध है। उसके पास खुद की बनाई ऐसी विज्ञान किट है जिससे वो बच्चों को जादू में छिपे विज्ञान को समझाता है और विज्ञान को एक मजेदार विषय बनाने में कार्यरत है। आसपास के अध्यापक ही नहीं बल्कि दूर–दराज के अध्यापक भी उससे टीएलएम बनाने की जानकारी, और अनुप्रयोग पर खुलकर बातें तो करते ही हैं साथ–साथ उसके द्वारा छेड़े गए अभियान, कि "हर विद्यालय के पास कबाड़ से जुगाड़ पर आधारित स्वनिर्मित प्रयोगशाला हो जो विज्ञान को एक मजेदार विषय बना सके" में भी सहयोग कर रहे हैं।

वो बताते हैं कि 'जी हां, वह बालक मैं ही हूं। जिसे बच्चे आज जादूगर सर के नाम से बुलाते हैं। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा उड़ामा गांव में हुई, स्नातक विज्ञान में पिथौरागढ़ डिग्री कॉलेज से करने के बाद परास्नातक डीएसबी कैंपस, नैनीताल से किया और घर–परिवार के दबाव में आईएएस की कोचिंग में लग गया। लेकिन मेरा मन वहां नहीं लगा और तैयारी बीच में छोड़कर वर्ष 2012 में बीटीसी की।

मैं विज्ञान के सिद्धांतों और प्रयोगों को कैसे आसानी से समझा जाए पर बचपन से कार्य कर रहा था और इस प्रकार की सामग्री चाहे जहां मिल जाती उसे एकत्रित कर लेता। मुझे याद है कि विज्ञान के प्रयोगों के लिए इन्टरनेट या अन्य स्रोतों से प्राप्त सामान को जुटाना मेरे लिए बड़ा ही

मुश्किल होता था। इसके लिए मुझे दिल्ली, हल्द्वानी, देहरादून न जाने कहां–कहां जाना पड़ा। घरवालों के लिए ये बेकार का काम था और गांव के लोगों के लिए मजाक का साधन। ऐसे में जब कोई मुझे साइंटिस्ट कहता तो मैं जानता था कि वो मेरी मजाक बना रहा है पर मैं कुछ ना कह पाता था क्योंकि एक तो बेरोजगारी चरम पर थी, वहीं घरवाले भी खर्च देने में गुरेज करने लगे थे। फिर भी मैं आसपास के बच्चों के साथ विज्ञान के सरलतम प्रयोग करके उनके पीछे छिपी अवधारणाओं को समझाता रहा और बच्चे मजे से मेरा साथ देते रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि मेरे पास आसपास के विद्यालयों से 'विज्ञान मेला' लगाने के आमंत्रण आने लगे। चूंकि अब तक मेरे पास 60 से ज्यादा वर्किंग मॉडल तैयार हो चुके थे तो इसमें मुझे कोई समस्या नहीं थी और यहां से एक मुहिम चल पड़ी। इन सब से क्षेत्र में मेरी एक सकारात्मक छवि बनने लगी थी।

मुझे याद है कि सर्वप्रथम मैंने विज्ञान मेला 'वेदा पब्लिक स्कूल डीडीहाट (पिथोरागढ़)' में लगाया जहां बहुत से प्रयोगों जैसे जादुई बरसात, पिंजड़े में तोता, हाथ में छेद, खुले मुंह का गुब्बारा, मैग्नेटिक ट्रेन, ढक्कन से चिपकी गेंद, विद्युत चुम्बक, श्वसन तंत्र आदि, को देखकर बच्चे आश्चर्यचकित हो गये और जादू–जादू कह तालियां बजाने लगे, पर जब इनके पीछे छिपे विज्ञान पर चर्चा हुई तो सब कह उठे ये कितना आसान

है। इसके बाद वहां के अध्यापकों के साथ इनको बनाने पर चर्चा की। वास्तव में वहां के प्रधानाचार्य श्री रविन्द्र जेठी जी के शब्द कि "इतनी छोटी उम्र और इतना बड़ा कार्य, धीरज विज्ञान ऐसे भी पढ़ाया जा सकता है, तुमने मेरी सोच बदल दी, आज भी मुझे प्रेरणा देते हैं। वहां से चला ये सफर कई स्कूल और अध्यापकों तक पहुंच चुका है अब तो बच्चे देखते ही 'जादू वाले सर' के नाम से चिल्लाने लगते हैं।

2012 में बीटीसी करने के पश्चात मैंने खूब विज्ञान मेले आयोजित किये। इसी बीच मुझे राजकीय प्राथमिक विद्यालय तोलिख्वा कोट, ब्लॉक कनालीछीना में सहायक अध्यापक के रूप में नियुक्ति मिली और बच्चों के साथ, उनके परिवेश से जुड़ने का मौका मिला। इसी दौरान एक दिन मुझे डायट डीडीहाट से श्रीमती सुनीता पाण्डेय का फोन आया कि आपको मुख्य सन्दर्भदाता (Key Resource Person) के प्रशिक्षण हेतु देहरादून जाना है। मैंने कहा "मैडम मेरी उम्र तो बहुत कम है और इस क्षेत्र में अनुभव न के बराबर है, मैं कैसे कर पाउंगा" उनका जवाब सुन मैं भौंचक्का रह गया। वो बोलीं "तुम्हारी पहचान उम्र से नहीं तुम्हारे काम से है। तुम्हारी इस कला को जिले के शिक्षकों के बीच पहुंचाने का इससे अच्छा मौका नहीं मिलेगा, तैयार हो जाओ।"

देहरादून की ट्रेनिंग में विज्ञान के क्रियाकलाप के दौरान अपनी विज्ञान किट से बहुत से प्रयोग प्रदर्शित किये और सभी से मिले पुनर्बलन से अपने आपको गौरवान्वित महसूस कर रहा था कि तभी SCERT के साइंस को–ऑर्डिनेटर श्री एस.के.गौड़ मेरे पास आये और मेरे कन्धे पर हाथ रखकर बोले "धीरज आज मैं आपका प्रशंसक हो गया हूं।" डायट डीडीहाट में मास्टर ट्रेनर्स की ट्रेनिंग के दौरान मैंने यही प्रयोग दोहराए और इनको कैसे बनाएं, कैसे प्रयोग करें व किस अध्याय के किस टॉपिक के साथ इनको जोड़कर उस टॉपिक को मजे से सिखाया जा सकता है, पर खुलकर चर्चा की। इससे प्रभावित होकर एक शिक्षक साथी श्री खोलिया जी बोले कि मैं अपनी चौदह साल की सर्विस में पहली बार एक जीवंत ट्रेनिंग करके जा रहा हूं।

एक और घटना मुझे याद आती है कि एक दिन राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय आणाचौरा के प्रधानाचार्य श्री एल.डी.शर्मा जी ने फोन करके कहा कि हम अपने विद्यालय में कबाड़ से जुगाड़ पर आधरित स्वनिर्मित प्रयोगशाला बनाना चाहते हैं इसके लिए आपके साथ की जरूरत है। इसके बाद हमने मिलकर इस विद्यालय में बहुत ही सुंदर स्वनिर्मित, मितव्ययी प्रयोगशाला स्थापित की।

यहां से विद्यालयों में इस प्रकार की प्रयोगशालाएं स्थापित करने का अपने अध्यापक साथियों को प्रेरित करने का विचार आया और इस पर कार्य शुरू कर दिया और साथियों को विज्ञान में बच्चो की रुचि कैसे बने को लेकर चर्चाएं शुरू कर दीं।

हमारे बच्चों का शरदोत्सव (डीडीहाट) में विज्ञान की कबाड़ से जुगाड़ प्रतियोगिता में प्रथम स्थान तथा सपनों की उड़ान कार्यक्रम में CRC (Cluster Resource Center) स्तर पर सात व BRC (Block Resource Center) स्तर पर तीन पुरुस्कार प्राप्त करने से लगता है कि हमारा प्रयास फलीभूत हो रहा है।

विद्यालय पहुंचने के लिए लगभग 3 किलोमीटर के जंगली और पैदल रास्ते को पार करते हुए एक दिन मेरा ध्यान बुरांश के बेकार पड़े फूलों पर गया। उस दिन मैंने सोचा कि क्यों न इससे अपने क्षेत्र के बेरोजगार युवाओं के लिए कुछ रोजगार तलाशा जाए। हमने स्कूल के प्रधानाध्यापक के साथ विचार–विमर्श के बाद इन युवाओं को बुरांश के फूलों से जूस बनाने और उसकी मार्केटिंग करने का प्रशिक्षण देने हेतु कार्यशाला का आयोजन किया। अब यह कार्यशाला हम अपने विद्यालय में प्रत्येक वर्ष आयोजित करते हैं जिसमें विद्यालय प्रधानाध्यापक श्री प्रकाश चंद्र उपाध्याय का सहयोग सराहनीय है।

आज भी मेरा ध्यान इस बात पर रहता है कि खेल–खेल में विज्ञान कैसे बेहतर पढ़ाया जा सकता है। इसके लिए कौन सी विधि आसान है। कैसे बच्चा अपने परिवेश में बिखरे ज्ञान को किताबी दुनिया के साथ जोड़कर बेहतर विकास की और बढ़ता है।

बातें तो यहीं खत्म हो जाती हैं मगर सीखने–सिखाने का यह क्रम कुछ नए प्रयोगों, नए बच्चों व नए विद्यालयों में स्वनिर्मित प्रयोगशालाएं बनाने के साथ चलता रहेगा।

(डायट डीडीहाट में एमटी ट्रेनिंग के दौरान मेरी मुलाकात अजीम प्रेमजी फाउंडेशन पिथौरागढ़ के साथी श्रवण कुमार से हुई। उन्होंने उत्तराखण्ड के शिक्षक साथियों के प्रयासों का दस्तावेज 'उम्मीद जगाते शिक्षक' देते हुए मेरे अपने अनुभवों को लिखने के लिए प्रोत्साहित किया)।

– धीरज खडायत

शोभा बिष्ट
प्रधानाध्यापिका
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
गौलीमहर, लमगड़ा
जनपद – अल्मोड़ा

बच्चों में घुलमिल जाती है उनकी मीठी हंसी...

सहायक अध्यापक – कमला जीना
सीआरसीसी – एम.बी. गोस्वामी
भोजनमाता – मुन्नी देवी, सावित्री देवी
नामांकन – 29

अंधेरे गलियारों में उम्मीदों के उजाले.....
घने अंधेरे हैं मन डरे हैं

आओ एक चिराग मैं जलाऊं

एक तुम जलाओ

रौशनी हो ही जाएगी

इस अंधेरे से पार पा ही लेंगे

कोशिश करके तो देखते हैं...

गौलीमहर विद्यालय अल्मोड़ा जिले में लमगड़ा ब्लॉक मुख्यालय से करीब दो किलोमीटर दूर है। विद्यालय सड़क से ज्यादा दूर नहीं है। विद्यालय पहुंचने पर अध्यापिका शोभा बिष्ट मुस्कुराते हुए आगंतुकों का स्वागत करती हैं। यहां पर समुदाय और खुद के प्रयासों से शोभा जी ने बच्चों के अधिगम स्तर को संवारने–निखारने का अच्छा प्रयास किया है। शोभा जी विद्यालय की प्रधानाध्यापिका हैं। विद्यालय में उनके साथ एक शिक्षिका और भी हैं।

शोभा जी इस विद्यालय में 2005 से कार्यरत हैं। उस वक़्त यह विद्यालय नया–नया ही खुला था। उन दिनों विद्यालय पंचायत घर के एक कमरे में ही चलता था। शुरुआत में यहां 25 बच्चे थे। गांव के कुछ बच्चे पास के ही निजी विद्यालयों में जाते थे। उसके बाद विद्यालय का अपना भवन निर्मित हुआ। वर्तमान में विद्यालय में 4 कक्षा–कक्ष एवं एक कार्यालय है।

शोभा जी विद्यालय में छात्र संख्या बढ़ाने और बच्चों के अधिगम स्तर को बढ़ाने के लिए हमेशा से ही प्रयासरत रही हैं। शोभा जी ने बताया कि शुरू में छात्र संख्या बढ़ाने के लिए उन्होंने समुदाय के बीच कंबल और बच्चों को जूते वितरित करवाए। वे एक आध्यात्मिक संस्था से भी जुड़ी हैं। यह कार्य इसी संस्था के माध्यम से किया। समुदाय के बीच कोई भी कार्यक्रम हो उन्हें बुलाया जाता है। उनके लिए विद्यालय में ही उनके हिस्से का पैण (कुमाऊँनी शब्द जो किसी त्योहार या समारोह की वस्तुओं के

आदान–प्रदान में प्रयुक्त होता है) दे जाते हैं।

उनके विद्यालय में बच्चों के पास आईकार्ड हैं और वे टाई पहनते हैं। इसके बारे में पूछने पर उन्होंने बताया कि आस–पास कई निजी स्कूल हैं। वहां बच्चे ये सब पहनते हैं। विद्यालय बच्चों तथा उनके अभिभावकों को सरकारी स्कूल कमतर न लगे इसीलिए उन्होंने यह किया। छात्र संख्या बढ़ाने और बच्चों के आत्मविश्वास बढ़ाने का यह एक अच्छा साधन है। स्वच्छ गणवेश में ये बच्चे किसी का भी मन मोह सकते हैं। कक्षा एक और दो को छोड़कर शेष सभी बच्चों के लिए फर्नीचर की व्यवस्था है। बच्चों की कॉपी, किताबें स्वच्छ और जिल्द चढ़ी हुई हैं।

शिक्षाविदों का मानना है कि जिस विद्यालय में अध्यापक का दृष्टिकोण बच्चों के प्रति सकारात्मक और व्यवहार मित्रवत होता है वहां बच्चे भी स्वयं प्रसन्न मुद्रा में सीखने–सिखाने कि प्रक्रियाओं में शामिल होते हैं, वहां बच्चे जल्दी सीखते हैं। इस बात को शोभा जी ठीक से जानती हैं। बच्चे उनसे अत्यंत घुले–मिले हैं। स्कूल भ्रमण के दौरान जब मैं कक्षा प्रक्रियाओं में उनके साथ शामिल हुआ तो पाया कि मुझसे घुलने–मिलने के बाद बच्चे शोर करने लगे तो शोभा जी ने हंसते हुए बच्चों की ओर देखा और कहा 'कौन–कौन शोर कर रहा है' हालांकि वो डांट नहीं थी फिर भी बच्चे शांत हो गए और हंसते हुए ध्यानपूर्वक उनकी बात सुनने लगे। यही बात उनके पढ़ाने के दौरान भी दिखती है।

अपने विद्यालय में शोभा जी नियम से स्कूल मैनेजमेंट कमेटी (SMC) की मीटिंग आयोजित करवाती हैं। समुदाय के लोगों के साथ मिलकर विद्यालय की समस्याओं पर चर्चा होती है और हल निकलते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि गांव में शादी वगैरह होती है तो बच्चे स्कूल नहीं आते हैं। इसके लिए भी शोभा जी ने गांव में सभी अभिभावकों से बात करके

नियम बनाया कि समारोह वाले दिन भी बच्चे दो–ढाई बजे तक स्कूल में ही रहेंगे फिर समारोह में शामिल होंगे। कई बार माता–पिता ये कहते हैं हम तो खुद ही पढ़े नहीं हैं। बच्चों को कैसे पढ़ांए? इस पर शोभा जी कहती हैं शाम को रोटी बनाते वक्त प्रत्येक मां अपने बच्चे को सामने बिठाये और कहे कि जो आज स्कूल में सीखा उसे बताओ। तो यह तरीका भी उसे पढ़ने के लिए प्रेरित करने में कारगर हो सकता है।

शोभा जी के विद्यालय में टीएलएम सामग्री हमेशा बच्चों के बीच ही रहती है। उनके कार्यालय में बच्चे किसी भी समय आ–जा सकते हैं। उनके विद्यालय में रंग, पेंसिल और अन्य स्टेशनरी हमेशा उपलब्ध रहती है। बच्चे चित्रकारी भी करते हैं और कागज से वस्तुएं भी बनाते हैं। वे इस बात को भी जानती हैं कि हर बच्चा महत्वपूर्ण है और हर बच्चा सीख सकता है। पढ़ाते समय भी वे हर बच्चे से बात करती हैं और प्रश्न पूछती हैं। प्रश्न पूछते समय बच्चे का उत्साहवर्धन करती हैं जो कि बच्चे के लिए हितकर है। बच्चों से बात करने पर बच्चे एकदम जवाब देते हैं।

यहां बच्चे चहके–महके से हैं। खेल स्कूल का अभिन्न हिस्सा है। सुबह की सभा में भी सभी बच्चे बारी–बारी से प्रतिभाग करते हैं। स्कूल के काम भी बच्चों के बीच बांट रखे हैं जिससे बच्चा विद्यालय को अपना समझता है और उससे जुड़ा रहता है। शोभा जी विशेष रूप से ध्यान रखती हैं कि कौन बच्चा ज्यादा प्रतिभाग कर रहा है और कौन कम।

उम्मीद की किरण कहीं से भी आए वो प्रकाश सब जगह करती है। उम्मीदों की किरणें प्रसारित करते ऐसे शिक्षक ही हमारे सरकारी शिक्षा तंत्र में सकारात्मक परिवर्तन ला सकते हैं। ये परिवर्तन एकाएक नहीं आ सकते इसके लिए इस तरह के छोटे–छोटे प्रयास करने होंगे। हर ओर से ऐसे प्रयासों के किरण पुंज निश्चय ही प्रकाश फैलायेंगे।

(शोभा बिष्ट जी की पूरन जोशी से हुई बातचीत पर आधारित)

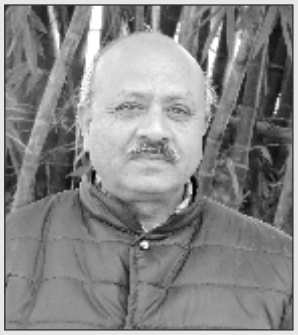

हुकुम सिंह उनियाल
प्रधानाध्यापक,
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
55 राजपुर रोड, देहरादून
जनपद – देहरादून

एक समूची व्यवस्था हैं उनियाल सर

सहायक अध्यापक – रामप्रकाश भट्ट, श्रीमती प्रतिमा सिंह, विजयलक्ष्मी नौटियाल एवं कुसुमलता बंगवाल
सीआरसी – अमिता रावत
भोजनबन्धु – ज्योत सिंह
वार्डन – संगीता एवं कुशल कुमार
नामांकन – 158

प्रधानाध्यापक हुकुम सिंह उनियाल के साथ पहली मुलाकात शैक्षिक नेतृत्व एवं प्रबंधन की कार्यशाला के दौरान हुई। परिचय के दौरान प्रशिक्षक ने बताया आज यहां पर कुछ ऐसे प्रधानाध्यापक भी हमारे साथ हैं, जिनके नेतृत्व में विद्यालय काफी अच्छे चल रहे हैं। चाय का ब्रेक हुआ सभी प्रतिभागी चाय लेने के लिए कॉरिडोर में आये। सभी चाय पी रहे थे तो प्रशिक्षक आर.बी.सिंह ने कहा कि यदि हम अपने आप से बदलाव की बात कर रहे हैं तो क्या आज हम इस कॉरिडोर की सफाई के लिए पहल कर सकते हैं। कहने भर की देर थी उनियाल जी ने झाड़ू ली और कुर्सी पर चढ़कर जालों की सफाई करने लगे। देखते ही देखते जितने प्रतिभागी और प्रशिक्षक थे सभी इस काम में जुट गये। थोड़ी देर में कॉरिडोर चमक उठा। पांच दिवसीय कार्यशाला, जिसमें उनके अनुभवों को लेते हुए अकादमिक, प्रबंधकीय, सामाजिक पक्ष में कुशल नेतृत्व कैसे हो सकता है पर चर्चा करनी थी। अंतिम दिवस मैंने उनके कामों को समझने के लिए उनके विद्यालय का भ्रमण हेतु अनुमति ली।

यह विद्यालय (राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, देहरा, 55, राजपुर रोड) देहरादून शहर के बीचोबीच सेंट जोजेफ एकेडमी के सामने स्थित है। इसमें 146 बच्चे पढ़ते हैं। विद्यालय आवासीय और गैर आवासीय दोनों तरह से चलता है यानी 117 बच्चे विद्यालय में रहते हैं और 29 बच्चे बाहर से आते हैं। विद्यालय के प्रधानाध्यापक व अन्य साथियों ने मेहनत व लगन से जरूरतमंद बच्चों के लिए यह अवसर तैयार किये हैं। अलग–अलग परिवेश से जुड़े बच्चों का एक साथ दो कमरों में रहना, साथ खाना, साथ पढ़ाई करना वाकई मुझे अनजान शब्दों में यह कह गया कि सफर मुश्किल है पर आत्मविश्वास और साहस से सफर को तय करना काबिले–तारीफ है। हुकुम सिंह उनियाल मई 2008 से इस विद्यालय में हेड मास्टर के रूप में काम कर रहे हैं और आपकी अपनी पहल से ही आवासीय विद्यालय संचालित हो पाया है। विद्यालय में शहर के अलावा राज्य के अन्य जिलों के साथ–साथ भारत के कुछ राज्यों के बच्चे भी पढ़ाई कर रहे हैं। चार कमरों का यह स्कूल जिसमें बच्चे पढ़ते और रहते भी हैं। दो कक्षाएं टीन शेड और

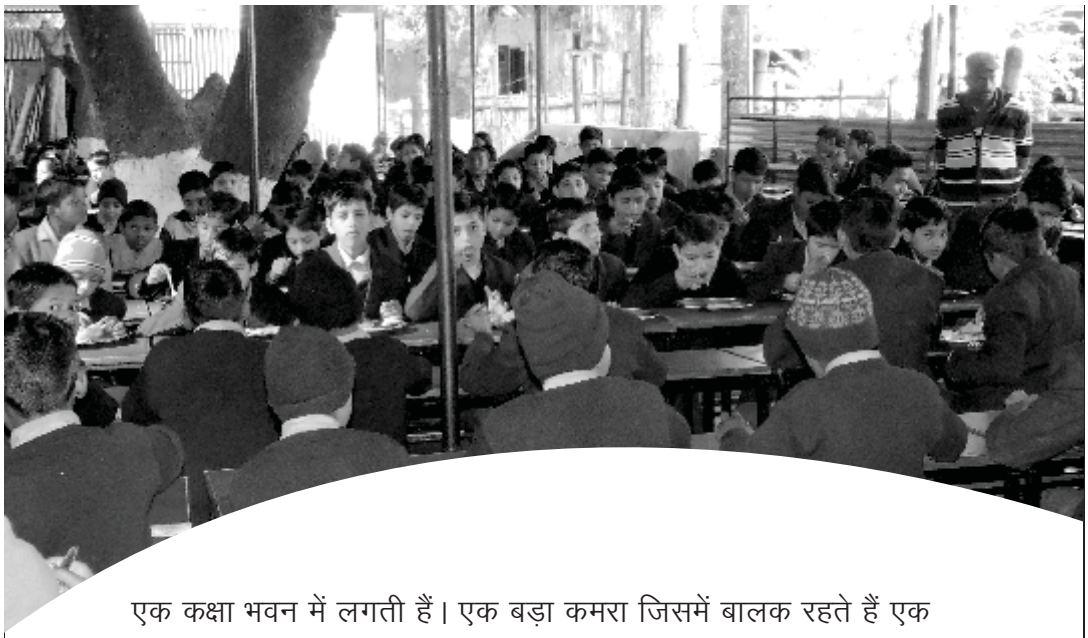

एक कक्षा भवन में लगती हैं। एक बड़ा कमरा जिसमें बालक रहते हैं एक छोटा जिसमें बालिकायें व संगीता रहती हैं। संगीता जो आवासीय विद्यालय के बच्चों की देखभाल करती हैं, उन्हीं के साथ रहती हैं साथ ही अपनी पढ़ाई भी कर रही हैं। उनियाल जी कक्षाकक्ष में बच्चों के साथ जितनी गहनता और आत्मीयता के साथ जुड़े हैं उतनी आत्मीयता बाहरी लोगों से भी इन बच्चों को मिल रही है। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है विद्यालय की आवासीय व्यवस्था को अनाथाश्रम समझकर 40 ऐसे बच्चे भी इस छात्रावास में रहते हैं जिनका यह विद्यालय नहीं है किन्तु हेडमास्टर ने इन छात्रों की शिक्षा के लिए अध्यापकों की व्यवस्था कर इनकी शिक्षा का प्रबन्ध किया है। इन छात्रों को सर्वशिक्षा अभियान भी एन.आर.एस.टी. के तहत 5 या 6 माह का आर्थिक सहयोग करती है। बाकी की व्यवस्था समुदाय के सहयोग से हो पाती है। इन बच्चों को संध्या के समय बी.टेक के कुछ छात्र गणित, साइंस पढ़ाते हैं। वही दूसरी तरफ सेंट जोजेफ एकेडमी में बच्चे अतिरिक्त समय में पढ़ने जाते हैं। प्रधानाध्यापक की पहल से यह प्रक्रिया हो पाई है।

इस विद्यालय को देहरादून शहर की ऐतिहासिक सूची में दर्ज किया जा सकता है, क्योंकि यह विद्यालय 200 वर्ष पुराना है। तब यह विद्यालय देहरादून जिले का एकमात्र अपर प्राइमरी विद्यालय हुआ करता था जहां हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू तीनों मीडियम चलते थे, आवासीय विद्यालय था और

फीस भी ठीकठाक। पहले यह विद्यालय पलटन बाजार में जहां आजकल कोतवाली है, वहां पर स्थित था फिर सन् 1943 से 1952 तक जहां आज सचिवालय है में संचालित हुआ। उसके पश्चात सन् 1953 में इस भवन में स्थानान्तरित हुआ। इस बीच उनके साथ बातचीत चल ही रही थी तभी एक बच्चा आया कि मुझे घर जाना है क्योंकि उसके आसपास के और भी दो बच्चे घर जा रहे थे उनके पापा आये थे उनको लेने के लिए। उन्होंने उस बच्चे को मना कर दिया बाद में उन्होंने बताया कि इसके पापा जेल में हैं और मां घरों में काम करती है और चाहती है कि मेरा बच्चा पढ़े। उसके बाद मैंने कक्षा में बच्चों से मिलने का आग्रह किया और उन्होंने कहा कि आप पीछे की तरफ चली जाइये। यह बात उन्होंने इसलिए कही कि कुछ अभिभावक बाहर बैठे थे जो अपने बच्चों का एडमिशन कराने आये थे। कक्षावार बच्चे कक्षा में बैठे हैं अपनी साफ सुथरे गणवेश और टाई पहने बच्चों ने जैसे ही देखा अभिवादन के स्वरों की आवाज कक्षा में गूंजी। मैंने आदर के साथ पूछा कैसे हो? उन्होंने जवाब दिया, हम अच्छे हैं आप कैसी हैं? इसी के साथ मैं उनके बीच बैठ गई। कई दिनों बाद विद्यालय में जाना हो रहा था इसलिए कुछ बच्चे जान नहीं पा रहे थे तभी उनियाल जी आये और मेरा परिचय दिया। बच्चों का आत्मविश्वास व आत्मीयता से उनके अभिवादन से दिख रहा था।

कुछ दिनों बाद फिर विद्यालय जाना हुआ। थोड़ी देर उनियाल जी से बातचीत करने के बाद में संगीता के साथ बैठी। चारों तरफ से घिरी हुई संगीता कक्षा 3 के बच्चों को गणित पढ़ा रही थी इतने में मध्यान्ह भोजन के लिए घंटी बजी। बच्चों ने कक्षा में ही खाना खाया। किसी भी बच्चे ने थाली में भोजन नहीं बचाया उन्हें निर्देश है कि जितना खाना है उतना ही लेना है और उसे बर्बाद नहीं करना है। सभी ने करीने से अपनी थाली को धोया और खेलने में मस्त हो गये।

कुछ दिनों बाद मैं फिर थोड़ी देर से विद्यालय पहुंची कुछ देर उनियाल जी व अन्य शिक्षकों से बाचतीत करने के बाद मैं भवन में पीछे गई। बच्चों की छुट्टी हो चुकी थी। आवासीय कमरे को बच्चों ने सलीके से साफ–सुथरा

रखा है। अंदर देखा तो कुछ बच्चे पढ़ रहे हैं। कुछ सो रहे हैं और कुछ अपने कपड़े धोने में लगे हुए थे। सब अपने अपने काम में मस्त। एक बच्ची जिसका एक हाथ कुहनी से और एक पैर का घुटना नहीं है, अपना काम बखूबी से करती है। उनियाल जी ने बताया कि कभी उस बच्ची ने परेशान नहीं किया सब कुछ अपने आप कर लेती हैं और सभी से ऐसी दोस्ती है सब मदद के लिए हर पल तैयार रहते हैं पहले यह बच्ची दर्शन लाल चौक में भीख मांगती थी।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 यह कहता है कि माह अप्रैल के प्रथम तीन सप्ताह के भीतर प्राइमरी तथा अपर प्राइमरी स्कूलों में स्कूल प्रबंधन समिति का गठन हो जाना चाहिए। इस दौरान सभी स्कूल इस प्रक्रिया को पूरा करने के लिए औपचारिक/अनौपचारिक रूप से अभिभावकों से सम्पर्क कर समिति का गठन करते हैं। शिक्षा का अधिकार कानून का पूरा पालन करते हुए लोकतांत्रिक तरीके से विद्यालय प्रबंधन समिति के चुनाव की प्रक्रिया होते हुए देखा। महिलाओं व पुरुषों की पूरी भागीदारी, एजेण्डा पढ़कर सभी को सुनाना व चुनाव कराकर माह की हर बैठक में शामिल करने की प्रक्रिया महत्वपूर्ण दिखी।

प्रधानाध्यापक का सामाजिक सरोकारों से गहरे नाते का इस बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि विद्यालय भवन जर्जर हालत में है। किराये में होने के कारण निर्माण प्रतिबंधित है। लेकिन उन्होंने अपनी कोशिशों से समुदाय से सहयोग लिया और टीन शेड के तीन कमरे, चारदीवारी, 13 शौचालय का निर्माण और 125 छात्र–छात्राओं के बेड व बिस्तर, स्टेशनरी व भोजन की व्यवस्था की है। प्रधानाध्यापक ने दो तरह के समुदायों के साथ समन्वय बनाया है पहला अधिकांश ऐसे बच्चे जिनके माता–पिता नहीं हैं, एकल माता–पिता या किसी न किसी परिस्थितियों के कारण न पढ़ पाने वाले बच्चों को वरीयता देकर पढ़ाना वहीं दूसरी तरफ

ऐसा समुदाय जो इनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार रहता है। वे कहते हैं कि मुझे चिन्ता होने लगती है कि अगले सप्ताह का राशन कहां से आयेगा लेकिन सप्ताह पूरा होने से पहले ही कहीं न कहीं से राशन आ जाता है। सामाजिक सरोकारों से जुड़े नागरिक, व्यापारी, संस्थाएं, विद्यार्थी किसी न किसी रूप में अपना योगदान दे रहे हैं। कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं प्रतिमाह इन बच्चों को आर्थिक मदद करती हैं और कक्षा 9 से 12 तक के बच्चों को अपनी संस्था में रखकर पढ़ा रही हैं। ये वो बच्चे हैं जो यहां से कक्षा आठ पास कर चुके हैं। कई अभिभावक अपने बच्चों का जन्मदिन अपने घर में न मनाकर इन बच्चों के साथ मनाते हैं। उनियाल जी तो हर त्योहार इन बच्चों के साथ मनाते हैं। साफ–सुथरा स्कूल लेकिन संसाधनों की कमी के बावजूद बच्चे पढ़ रहे हैं। प्रधानाध्यापक का कहना था कि हम अपनी तरफ से कर पूरा प्रयास करते हैं। नामांकन लगातार बढ़ रहे हैं लेकिन आवासीय व्यवस्था नहीं है। मना करने जैसा भी नहीं लगता क्योंकि जरूरतमंद बच्चे ही सरकारी स्कूल में आते हैं। वे बताते हैं जो बच्चे यहां से पढ़कर आगे की कक्षाओं में जा रहे हैं, वे अपनी कक्षा के बेहतर विद्यार्थी हैं।

अपने लक्ष्य को साधे हुए चिंताओं को अपने कुशल अकादमिक, प्रबंधकीय, सामाजिक नेतृत्व की मिसाल बने उनियाल जी के मन में एक यह भी सवाल है कि अभी भी कई ऐसे कई बच्चे हैं जिनको शिक्षा की जरूरत है। जहां निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की बात हो रही है वहां पर आज भी बच्चे विद्यालय नहीं पहुंच पा रहे हैं। हमारे समाज में ऐसे बहुत अध्यापक हैं जो बच्चों के लिए कुछ भी करने की इरादों के साथ इसी व्यवस्था में काम कर रहे हैं। जरूरत है ऐसे अध्यापकों की पहल को सामने लाने की जिससे समाज में सरकारी स्कूल के प्रति सकारात्मक धारणा बन सके।

(हुकुम सिंह उनियाल जी की चंद्रकला भंडारी से हुई बातचीत पर आधारित)

महेश चंद्र वर्मा
प्रधानाध्यापक
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
मोहनपुर, गदरपुर ब्लॉक
जनपद – उधमसिंह नगर

परिवर्तन की ओर कदम

भोजनमाता – सुजाता एवं सीमा

सीआरसी – वासुदेव पाण्डे

नामांकन – 59

महेश चंद्र वर्मा जो कि मोहनपुर प्राथमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापक हैं कहते हैं ''संख्या की तुलना में गुणवत्ता महत्वपूर्ण है, मैं गुणवत्ता पर कोई समझौता नहीं करना चाहता।'' मोहनपुर, ऊधमसिंह नगर के गदरपुर ब्लॉक का एक गांव है। महेश चंद्र वर्मा रुद्रपुर से इस गांव बच्चों को पढ़ाने के लिए रोज आना–जाना करते हैं।

मोहनपुर प्राथमिक विद्यालय मुख्य सड़क से 2 किलोमीटर अंदर है। आने–जाने के लिए पैदल या अपने साधन का प्रयोग किया जा सकता है। स्कूल तक जाने वाली सड़क के दोनों ओर बड़े–बड़े खेत हैं, और इस समय वहां रबी की फसल लहलहा रही थी और उसकी खुशबू हवाओं में तैर रही थी। यह समय गेहूं की कटाई का था। स्कूल के आस–पास के घर कच्चे और खपरैल की छत के थे। स्कूल के परिसर में बहुत सी बत्तखें दिखाई दे रही थी और हमें बतया गया की जहां कहीं भी बंगाली समुदाय के लोगों की बसाहट होती है वहां बत्तखें जरूर पाली हुई मिलती हैं, बंगाली लोग इसके अंडे बेचकर जीविका चलाते हैं।

महेश चंद वर्मा बताते हैं कि इन बच्चों के माता–पिता पढे लिखे नहीं हैं इसलिए पढ़ाई केवल स्कूल में ही होती है। इसके लिए केवल शिक्षक ही जिम्मेदार होता है और कुछ माता–पिता तो पढ़ाई का महत्व भी नहीं समझते हैं। वह अपने बच्चों को केवल मध्याह्न भोजन (मिड डे मील) के लिए भेजते हैं। इन बच्चों के माता–पिता जीविकोपार्जन के लिए खेतों में काम करते हैं और कुछ आसपास की फैक्ट्रियों में काम करते हैं। वह लगभग पूरे दिन घर पर नहीं होते हैं।

जैसे ही हम स्कूल के भीतर गए हमने देखा स्कूल में दो कमरे और एक बरामदा है। स्कूल का भवन काफी पुराना दिख रहा था। खेलने का मैदान बहुत बड़ा था और मध्याह्न भोजन (मिड–डे–मील) पकाने के लिए अलग से जगह थी। रसोई बहुत अच्छी थी जिसमें टाइल्स लगी हुई थी जो इस बात का प्रमाण था कि इसका निर्माण हाल–फिलहाल में ही हुआ है। रसोई के बाहर एक हैंडपंप भी लगा हुआ था। वहां दो शौचालय भी थे, दोनों साफ–सुथरे थे, लड़के लडकियां कोई भी शौचालय का प्रयोग कर

सकते थे। महेश जी ने बताया कि दोनों शौचालयों में पानी का प्रबंध उन्होने करवाया। वह बताते हैं कि जब रसोई के लिए पानी की व्यवस्था की जा रही थी तब उन्होंने प्लम्बर से इस बारे में बात की कि किस तरह दोनों जगहों पर पानी पहुंचाया जा सकता है। स्कूल में दो भोजन माताएं बच्चों का मध्याह्न भोजन बनाती हैं।

महेश चंद्र जी ने बताया कि मोहनपुर प्राथमिक स्कूल में कुल 59 बच्चे हैं जिसमें से 18 लड़के और 41 लड़कियां हैं। उन्होंने बताया कि माता–पिता लड़कों को निजी स्कूलों में भेजना चाहते हैं।

महेश चंद्र वर्मा मोहनपुर प्राथमिक शाला के प्रधानाध्यापक के तौर पर यहां 2013 में आए थे। वह इस स्कूल में अकेले शिक्षक थे उनके साथी शिक्षक 2 साल पहले से छुट्टी पर थे। महेश जी के लिए सहयोग करने के लिए कोई नहीं था पर वह बिना किसी शिकायत के अपने काम में तत्परता से डटे रहे। जब हम कक्षा में पहुंचे तो हमें देखा कि कक्षा एक और दो के बच्चे साथ ही बैठे थे। स्कूल की छत टूटी हुई थी और उसमें से ईंट और लोहे की छड़ें बाहर झांक रही थी। बच्चे जमीन पर टाटपट्टी पर बैठे थे, साथ की कक्षा में ही कक्षा तीसरी, चौथी और पांचवीं के बच्चे भी साथ में बैठे थे। कक्षा में कुछ डेस्क और बेंच भी थी जो एक कोने में रखी हुई थी। कक्षाओं में पर्याप्त रौशनी थी और बच्चे बहुत आराम से बैठे हुये थे। प्रधानाध्यापक

ने हमें बताया कि बच्चों के वार्षिक आकलन चल रहे हैं और यह देखना सुखद था कि बच्चों की आंखों में कोई भय नहीं था। बच्चे अपने प्रश्न पत्र से जवाब लिख रहे थे और कभी–कभी आपस में बातचीत भी कर रहे थे।

महेश चन्द्र जी दोनों कक्षाओं का ध्यान एक साथ रख रहे थे। वह व्यस्त थे, पर बहुत शांत, उत्साहित और बच्चों के लिए प्रेमभाव से भरे हुये थे। कोई भी उनके जोश और समर्पण को महसूस कर सकता था। उन्होंने बताया कि वह अकेले ही इन बच्चों के लिए कुछ कर सकते हैं। क्योंकि घर जाने के बाद कोई भी पढ़ाई में उनकी कोई मदद नहीं कर सकता है क्योंकि एक तो उनके माता–पिता के पास समय नहीं है दूसरे वह शिक्षित नहीं है।

उन्होंने बताया कि पिछले साल बहुत से बच्चों ने निजी स्कूलों को छोड़कर उनके स्कूल में नामांकन करवाया क्योंकि वह बच्चों का अधिगम स्तर बढ़ाने के लिए बहुत प्रयास करते हैं।

कक्षा तीसरी से पांचवीं तक के बच्चे कहानी की किताबें पढ़ सकते थे। यही बच्चे 'बाल पुस्तकालय' भी संचालित करते हैं। महेश चंद्र जी ने बरखा श्रृंखला की किताबें पुस्तकालय के लिए खरीदी हैं। बच्चे खुद ही पुस्तकालय खोलते हैं और बहुत समय पुस्तकालय में बिताते हैं। वह समूह में बैठकर भी जोर–जोर से पुस्तकें पढते हैं। बच्चे हिन्दी पढ़ने में बहुत सहज थे और वह खुद ही उससे हिन्दी कवितायें भी बना रहे थे। बहुत से बच्चों ने छोटी– छोटी कहानियां भी सुनाईं। यह देखकर आश्चर्य हुआ कि सभी बच्चे धाराप्रवाह हिन्दी बोल सकते थे जबकि उन सबकी मातृभाषा बंगाली थी। जब महेश जी से इस बारे में पूछा गया तो उन्होंने बताया कि कैसे वह अपने बच्चों को हिन्दी पढ़ाते हैं।

उन्होंने बताया कि किस तरह वह बच्चों को उनके अधिगम स्तर के अनुसार

चार समूहों में बांट देते हैं। समूह का निर्माण बच्चों के अधिगम स्तर को समझने के बाद किया जाता है। सभी पांच कक्षाओं के बच्चों को विषयवार बांटा जाता है जैसे– हिन्दी, अंग्रेजी और गणित। वह बताते हैं कि वह बच्चों की प्रगति रिपोर्ट भी बनाते हैं जिससे उन्हें हर बच्चे का अधिगम स्तर पता करने में मदद मिलती है और यह समझने में भी आसानी होती है कि बच्चे को क्या पढ़ाये जाने कि जरूरत है। जब बच्चा निश्चित लक्ष्य तक पहुंच जाता है तब वह अगले स्तर के समूह का सदस्य हो जाता है। इस तरह बच्चे प्रगति करते जाते हैं और एक बड़े समूह का हिस्सा हो जाते हैं।

महेश चंद्र वर्मा जी ने बताया कि इस साल उन्हें और अधिक बच्चों के नामांकन की उम्मीद है पर वह इसे ले कर बहुत उत्साहित नहीं है क्योंकि उनके पास कोई सहयोगी शिक्षक नहीं है। वह गुणवत्ता में कोई समझौता नहीं चाहते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वह चाहते हैं कि उनके बच्चे पढ़ें।

उन्होंने बताया कि अगले साल वह अपने स्कूल में एक लैपटॉप और प्रॉजेक्टर भी ले कर आएंगे ताकि वह बच्चों को सीखने के लिए कुछ ऑडियो–वीडियो सामग्री का उपयोग भी कर सकें। अभी वह कभी–कभी ऑडियो–वीडियो सामग्री का उपयोग करते हैं और यदि संभव होगा तो वह स्कूल के लिए एक इनवर्टर भी खरीदेंगे।

उन्होंने बताया कि उन्होंने बच्चों के साथ अथक परिश्रम किया है जो कि उनके बच्चों में प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। जैसे कि वह किताबें और कई तरह की छपी हुई सामग्री पढ़ सकते थे। बच्चे आत्मविश्वास से भरे हुए थे और सवालों के जवाब निडरता से दे रहे थे।

उन्होंने बताया कि विद्यालय प्रबंधन समिति (एसएमसी) की बैठक होती तो है पर वह नियमित नहीं है। वह खुद ही समुदाय में जाते हैं और सदस्यों से बातचीत करते हैं। वह बताते हैं कि बच्चों की पढ़ाई अच्छी देख कर माता–पिता खुद ही बच्चों को नियमित रूप से स्कूल भेजने लगे हैं। शुरू के दिनों में बच्चों को स्कूल में बनाए रखना बहुत बड़ी चुनौती थी। कक्षाओं की स्थिति देखते हुए उन्होंने विभाग को कक्षा सुधार के लिए आवेदन किया है और उसकी स्वीकृति भी आ चुकी है। उन्हें बताया गया है

कि बहुत जल्दी स्कूल के लिए एक नया भवन होगा।

उनसे बातचीत करके जब हम वापसी के लिए तैयार हुए तभी एक बच्चा दौड़ता हुआ आया और उसने एक हिन्दी कविता सुनाई ''चिड़िया चिड़िया'' उसे देखकर महेश जी मुस्कुराने लगे और कहा कि उन्हें बच्चों के साथ रहना बहुत अच्छा लगता है।

(महेश चंद्र वर्मा जी की रनदीप कौर वर्मा से हुई बातचीत पर आधारित)

नितिन देवरानी
प्रधानाध्यापक
राजकीय प्राथमिक विद्यालय
झड़गांव मल्ला
जनपद – नैनीताल

समर्पण बना दुर्गम की आस

सहायक अध्यापिका – मीना बेलवाल, मंजू जोशी
सीआरसी – राजेन्द्र सिंह बिष्ट
भोजनमाता – माधुरी देवी, चम्पा
नामांकन – 67

शिक्षक समाज में दुर्गम क्षेत्र के स्कूलों के प्रति एक खास तरह की विरक्ति देखी गयी है, इसका कारण शिक्षकों को तैयार करने वाली प्रणाली, बाजार और नगर को अहम मानने वाले विकास के मॉडलों और समाज में आए व्यापक सांस्कृतिक बदलाओं में देखा जा सकता है। लेकिन इसी व्यवस्था में कुछ ऐसे शिक्षक भी हैं जिन्होंने दुर्गम को अपनाया है। वहां स्कूलों में बदलाव के माध्यम से वह आशा की नयी किरण बने हैं। इस मायने में युवा शिक्षक साथी नितिन देवरानी एक अलग तरह की नज़ीर बनकर सामने हैं।

ऐसा युवा जो सुगम क्षेत्र में जन्मा और जिसने वहां की सुख–सुविधाएं देखी हों, जो मल्टीनेशनल कंपनी कैडबरी में काम करता हो और जिसने नितांत व्यावसायिक काम किये हों। जो आधुनिक गैजेट्स का आदी रहा हो और अचानक ओखलकांडा ब्लॉक के दूरस्थ गांव में शिक्षक बनकर आ जाये जिसकी अनंत दुश्वारियों का ध्यान भी कभी सपने में उसे न आया हो..

नितिन से उनके स्कूल प्रांगण में बैठकर ऐसे ही मैं जिक्र कर रहा था। मैं चाह रहा था उस बदलाव के बारे में वे बताएं, जो उन्होंने यहां आने पर महसूस किया।

भाई साब पहली नियुक्ति में और पहली बार यहां पहुंचा तो ऐसा ही कुछ बल्कि इससे कहीं ज्यादा मन में आया। मैं तो न ज्ञानी था न ध्यानी था। बस सरकारी नौकरी का मोह इस काम में ले आया था। मैंने अपने गृह नगर कोटद्वार के कॉलेज से बीएससी के बाद देहरादून से प्रबंधन की पढ़ाई की। फिर कई कंपनियों ने कई शहर दिखाए, पैसा भी ठीक ही मिल ही रहा था। पता नहीं क्यों पहाड़ से दूर जाने का मलाल बना रहता और पहला ही मौका मिला तो लपक ली मास्टरी।

नितिन के इस अंदाज का मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था, मुझे लगा वह बड़े आदर्शवादी युवा होंगे लेकिन वह बहुत सुलझे हुए थे और बिना लाग लपेट अपनी बात रखने लगे।

वह बताने लगे, नैनीताल जिले में नियुक्ति मिलने से मन भीतर ही भीतर

कुलांचे मार रहा था। रात में झिलमिलाती झील का मंजर सामने आ रहा था। घर से चलते–चलते सोच रहा था क्या ही सुंदर होगा मेरा स्कूल। स्कूल का नक्शा नैनीताल की छवि से ढंका था। लेकिन हल्द्वानी से निकलते–निकलते कुछ आशंका जन्म लेने लगी– जब टैक्सी में सीट पाने का संघर्ष शुरू हुआ। उद्विग्न मन इस सब को नकार भी रहा था। पहाड़ में आमतौर पर परिवहन सुविधाओं का यही तो हाल है। टैक्सी वालों पर किसी की नहीं चलती।

जैसे भीमताल पहुंचा तो मन बल्लियों उछल पड़ा। 'यस आई वॉज करेक्ट!' सुंदर झील के बाद गाड़ी एक अनजान सड़क से अनजान दिशा की ओर मुड़ गयी। अनिश्चितताओं और संभावनाओं से भरी संकरी सड़क पर चढ़ते–उतरते धानाचुली बैंड आया। एक दिशा मुक्तेश्वर की ओर, एक सिक्खों के तीर्थ स्थल रीठा साहब और एक ओखलकांडा की ओर।

उस दिन को याद करते हुए नितिन डूब से गए। वह पहाड़, हिमालय, गांव और स्कूल के बीच अपने लिए स्पेस तलाशने निकले थे। पहाड़ की पगडंडियों में अटका छोटा–सा गांव!

धानाचुली के बाद जैसे ही सड़क ने उत्तर दिशा का रुख किया गजब का दृश्य आंखों के सामने आया। 'यहीं है यहीं है स्वर्ग यहीं है!' आसमान

लपकती हिम श्रृंखलाएं गजब की चमक और स्फूर्ति से झिलमिला रही थीं। आगे बांज–बुरांश और देवदार मिश्रित घना जंगल। ठंडी हवा के झोंके ने नींद से जगाया। टैक्सी में ठुंसे–ठुंसे शरीर जड़ हो चुका था। आगे तीखी ढलानों वाले मोड़ थे और टैक्सी किसी घाटी की ओर जा रही थी। वनस्पतियों का चेहरा भी बदलने लगा। यहां जंगल बिखरा–बिखरा था। चीड़ और उतीश के ही वृक्ष कहीं–कहीं खड़े थे लेकिन पहाड़ तो ऐसा ही होता है। पेट एकदम भरा–भरा, पीठ एकदम खाली–खाली या कहीं इसका ठीक उलट। नीचे एक नदी का सा आभास मिल रहा था। मैंने नदी होने के बारे में सहयात्री से पूछा। पता चला यहां के पहाड़ों से दो नदियां जन्मती हैं। नंधौर और गौला। पहली बार इनके नाम मालूम हुए। नामालूम नदियों को अक्सर गदेरे का नाम मिलता है लेकिन कोई भी नदी स्थानीय लोगों के लिए गंगा ही होती है।

एक छोटा सा स्टेशन आया करायल। उसके बाद ढलान कम होने लगी। मोड़ तीखे नहीं थे और टैक्सी नदी के समानांतर जाने का प्रयास करने लगी। यहीं आया क्षेत्र का प्रमुख टाउन खनस्यू– यहीं बीआरसी कार्यालय था। इस जगह पर नदी पर एक पुल के सिवा कुछ भी रुचिकर नहीं था। उमस से एक अजीब सी निद्रा पसरी हुई थी। चेहरों पर कोई तेज नहीं। तभी उखड़े–उखड़े से टैक्सी वाले ने यहां उतार दिया और बताया झड़गांव के लिए दूसरी टैक्सी लेनी पड़ेगी।

टैक्सी बदलने के समाचार को जेहन में लाते हुए नितिन को करंट सा लगा। इस बात को समझा जा सकता है। हल्द्वानी से खन्स्यु तक का लंबा सफर और उसके बाद फिर से यात्रा का विचार, गुरु, मन पर पत्थर रख लिया। कमर कस ली। पंगा ले लिया है आगे बढ़ो। नई टैक्सी पर लदकर पहले झड़गांव तल्ला फिर मल्ला आया। तब तक नई मनःस्थिति बन चुकी थी।

स्कूल देखा तो और झटका लगा एक पुरानी सी बिल्डिंग और कुछ कुम्हलाये मुरझाये बच्चे।

मेरे सवाल का जवाब देते–देते नितिन को लगा वह कुछ अधिक कह रहे हैं हालांकि मेरे लिए उन्हें सुनते जाना खुद भी कुछ खोजते चले जाने जैसा था। वह बोले आगे आपके सामने है भला–बुरा सब।

नितिन से हमारी पहली मुलाकात सितंबर 2014 में डायट भीमताल में हुई एम.टी. ट्रेनिंग के दौरान हुई थी। हमने देखा कि वह प्रशिक्षकों में सबसे युवा हैं लेकिन सबसे अधिक सक्रिय भी वही हैं। बच्चों को चित्रों के माध्यम से कैसे कहना सिखाना है यह उनके वहां बनाये जा रहे चित्रों में देखने को मिल रहा था।

कहानी के माध्यम से भाषा, बोध और गणितीय आकलन साथ सिखाने के लिए उन्होंने एक सुंदर टीएलएम वहीं बैठे–बिठाये तैयार कर लिया। चंपा, बबली, मुन्नी, दीपा, खष्टी, प्रेमा और कमली की कहानी। बच्चे चित्र देखकर बता सकते थे कि कौन बड़ा है और कौन छोटा। रंग भी अलग–अलग। इस त्वरित टीचिंग लर्निंग मैटेरियल को की रिर्सोस पर्सन अनुराधा सक्सेना और दीक्षा जोशी ने काफी सराहा। अनुराधा ने तो खुद के स्कूल के लिए गिफ्ट भी करवा लिया। यह साबित हो गया कि नितिन अच्छे चित्रकार हैं और अपने इस फन को कक्षाकक्ष में बखूबी इस्तेमाल भी करते हैं। उनकी टेबल पर रखा कैमरा इस बात की तस्दीक कर रहा था कि वह फोटोग्राफी में भी खासी दिलचस्पी रखते हैं। बाद में मैंने उनके कैमरे की एलईडी स्क्रीन खोलकर देखी तो वहां लाइट, अपर्चर और मूड्स का अच्छा कॉम्बिनेशन था।

लंच के दौरान ओखलकांडा से प्रतिभाग कर रहे दूसरे शिक्षकों से सुनने को मिला कि नितिन भाई का तो स्कूल ही खुद एक चित्रहार है। यह भी मालूम हुआ कि उन्हें पड़ोस के शिक्षक अपने स्कूलों में चित्र बनाने को बुलाते हैं और वे खुशी–खुशी वहां जाना पसंद करते हैं। प्रशिक्षण के दौरान हमने देखा कि वह सुगमकर्ताओं को खासी चुनौती दे रहे हैं। उनके संदर्भ हमेशा ही बच्चों के सीखने में आ रही दिक्कतों से भरे होते

हैं। वह ट्रेनिंग में उनका समाधान चाहते हैं।

नितिन के स्कूल पहुंचकर अब मैंने उनसे पूछा यह चित्रहारी करने का जज्बा कहां से आया। मेरी उत्कंठा स्वाभाविक थी। मैं और मेरे साथी दरअसल इसी चित्रहार और इसके इस्तेमाल को जानने के लिए यहां आये थे।

कभी कूची छुई तक नहीं थी। वह बताते हैं बच्चों के साथ रम जाने और सीखने–सिखाने की जद्दोजहद में ये हुनर भी आजमा लिया। पहले आढी–तिरछी रेखाएं, फिर गोलाकार पैटर्न, फिर रंग और अब तो मेरे चित्रों में भाव–भंगिमाएं भी आने लगी हैं। दरअसल मैंने और बच्चों ने साथ–साथ ही सीखा।

मैंने देखा स्कूल की कोई भी दीवार या कोई भी स्पेस जाया नहीं जाने दिया गया था। बाउंड्री वॉल से अंकगणित झांक रही थी। पिलर्स से स्कूल के नियम गेट के पास ही एक सुंदर सी रचना में स्कूल अपना परिचय खुद बयां कर रहा था। चित्र, महज चित्र नहीं थे, उनके कुछ न कुछ मानी थे, जो बच्चों का स्कूल और सीखने से लगाव लाते दिख रहे थे। चित्रों को अमूर्तता और अनुपमता से बचाने की पूरी सावधानी यहां थी। जो चित्र गुरुजी बना सकते, करीब–करीब वैसा ही बच्चे भी बना लेते। विषय वस्तु स्थानीय परिवेश, वेश–भूषा और किताबी कंटेंट से संपृक्त। दीवार पर बनी लड़की, स्कूल में पढ़ने आई गांव की लड़की जैसी ही।

उनसे जब पूछा कि नितिन यह सब अचानक हुआ या धीरे–धीरे? तो उन्होंने कहा, 'अचानक भी हुआ और धीरे–धीरे भी। जब मन में ठान लिया कि कुछ करना है तो यह अचानक हुआ। लेकिन माध्यम तो धीरे–धीरे ही बने और अभी भी बचकाने ही लगते हैं। रोज घर से सोचकर निकलता हूं, आज कुछ बेहतर करूंगा। शुरू में बहुत चुनौतियां थीं यहां। पहली मुहिम संसाधन जुटाने को चली। आंगन में कीचड़ या धूल रहती थी। इसको ठीक किया। फिर नई बिल्डिंग का बजट आया, लेकिन जैसा होता है सरकारी रवैये में ढांचा खड़ा कर दिया जाता है चार दीवारों का–

जो यकीनन ही बच्चों के लिए नीरस होता है। मानो तय किया हो कि बच्चों को अच्छा लगने वाला नहीं होना चाहिए।

सच तो यह भी था कि मैंने कभी पढ़ाया नहीं था। मुझे नहीं मालूम था कि पढ़ाना किसे कहते हैं। और बच्चे क्या होते हैं, कैसे होते हैं, उसका ज्ञान भी यहीं आकर हुआ। चीजों को हटकर और बेहतर करने का कुछ ऐब तो पहले से था। लेकिन जल्दी समझ आ गया पढ़ाना कोई ऐरो–गैरों वाला काम नहीं। थोड़ी घबराहट भी हुई लेकिन यह सोचकर डट गया कि अगर मैं भाग गया तो मुझसे बुरा ही कोई आएगा। यहां से सीखने और जूझने की बात शुरू हुई।

मैंने इसके लिए संघर्ष किया विभाग और गांव वालों के साथ। गांव वालों को मेरे एक शिक्षक की रुचियों को समझने में वक्त लगा और विभाग को तो समझ तब आया जब सामने कुछ सजीव दिखने लगा। लेकिन जिस दिन गांव में आया और आज के दिन की बात करूं तो गांव वालों के रुख और रिस्पांस में काफी फर्क है। हालांकि यहां के हालात किसी भी दूसरे पहाड़ी गांव की तरह मुश्किल भरे हैं। सब्जी नहीं मिलती। अंडा नहीं मिलता। दूध मिलेगा, उसकी भी गारंटी नहीं। बाल काटने वाला नाई भी नहीं है यहां। एक शिक्षक मेरे बाल काटता है, मैं उसके काट देता हूं और मेरे काटे गए बालों को काफी पसंद किया जा रहा है और चाय–वाय पीना तो छोड़ ही दिया है।

स्कूल की बात करूं तो आज यहां इंफ्रास्ट्रक्चर बेहतर है। यह हमेशा तुलनात्मक ही होता है। बाकी सरकारी स्कूलों से यह बेहतर है। आईये हमारे स्कूल का टॉयलेट (सिस्टन) देखिये। फ्लश लगा है, ऊपर छत पर टंकी देख सकते हैं। ये जो टाइल लगी हैं मैंने ही घर से कटर लाकर तराशी हैं और किचन आप देख सकते हैं यह भी मॉड्यूलर किचन जैसी आपको लग सकती है। इसके ऊपर मैंने फाइबर प्लास्टिक लगाया है और

इधर आलमारियों के दरवाजों में मैग्नेट है। पानी से बिजली कैसे बनती है इसको समझाने के लिए यह हाइड्रोमीटर का रेप्लिका। बच्चों को एक बार झूठ पकड़ने वाली मशीन (लाई–डिटेक्टर) पर बात करते सुना तो उसको साकार करने का प्रयास किया। अरे हां, सच में इससे झूठ बोलने वाले बच्चे पकड़ में आ जाते हैं। वैसे मैं आपको बताऊं मैंने भी कभी लाई–डिटेक्टर नहीं देखा।

मेरी सहायक शिक्षिका बेलवाल मैडम से मिलिए। यह गांव की ही हैं, पहले शिक्षा मित्र थीं अब पक्की हो गयी हैं। गांव और स्कूल के बीच यह बहुत मजबूत कड़ी हैं। यहां बच्चों को पसंद आने वाली फिल्में हैं, प्रोजेक्टर है। कुछ गीत हैं (बॉक्स फाइल) बच्चों के लिए और मेरे लिए स्कूल का सबसे अहम् हिस्सा है। हमारी रैंप देखिये, इस पर से गुजरना बच्चों को बहुत मजा देता है। यहां देखिये झूले हैं ना सुंदर और टिकाऊ। दीवारों में चित्र आयल पेंट किये हैं। बच्चे आदतन खराब करते ही हैं तो इसे धोया जा सकता है। नितिन कहते हैं, स्कूल वैसे तो एक नॉन–लिविंग थिंग होती है लेकिन मुझे नहीं लगता वह नॉन–लिविंग थिंग होनी चाहिए।

देखिये हमारे स्कूल में उन लोगों के बच्चे हैं जो यहां से बाहर जा सकने की स्थिति में नहीं हैं। मात्र दो अभिभावक हैं जिन्हें आप नौकरीपेशा कह सकते हैं। एक के पिता संविदा में पोस्टमैन हैं, दूसरे के लोक निर्माण विभाग में गैंग मैन। बाकी सबके माता–पिता दिहाड़ी से गुजारा करते हैं, वह भी यहां मुश्किल से नसीब हो पाती है। गांव में शराब का प्रचलन बहुत है। घर चलाने का जिम्मा महिलाओं का ही है।

हमारे बच्चे गांव की छोटी–बड़ी बात सब मुझे आकर बताते हैं (हंसते हुए कहते हैं ये गांव में छोड़े गए मेरे जासूस हैं)। कई बार आसपास का परिवेश बच्चों के विकास को अवरुद्ध करने का काम करता है। बच्चे तो बच्चे हैं जो

सुना गाली–गलौज सब सीख जाते हैं। ऐसे में उन्हें एक जिम्मेदार और विवेक सम्पन्न नागरिक कैसे बनायें यह शिक्षक के सामने चुनौती है। यह ऐसी चुनौती है जिससे वह कभी भाग नहीं सकता।

मिलना शानदार बच्चों से

यह दूसरी बार था मैं और मेरे साथी झड़गांव मल्ला स्कूल पहुंचे थे। बच्चों से बातचीत में पहली ही बार लग गया था कि यहां के बच्चे शानदार बच्चे हैं। पहली बारी नितिन स्कूल में नहीं थे और अच्छे शिक्षक का स्कूल में न होना एक अच्छा मौका होता है उसकी मौजूदगी को जानने का। सहायक अध्यापिका जिनसे हम पहली दफा मिल रहे थे, ने हमारा उत्साह के साथ स्वागत किया था। करीब दो माह के अंतराल के बाद फिर से स्कूल जाना हुआ और नितिन से भी भेंट हो गयी।

नितिन ने स्कूल ड्रेस पर बहुत काम किया था। खुद ही कपड़ा खरीदकर लाये, खुद ही दर्जी के साथ बैठकर मनचाही सिलाई करवाई। हर एक बच्चे को सही नाप में अहमियत दी गयी। नितिन जब स्कूल में आये तो यहां 17 बच्चे थे, आज 67 बच्चे हैं। बच्चे और भी हैं, दूसरे गांवों से अभिभावक आते हैं, लेकिन अब ज्यादा बच्चे ले सकने की क्षमता नहीं है। जो बच्चे पढ़ने में पिछड़ रहे हैं, उन्हें समय देना जरूरी है। मायूसी में जी रहे गांव के लोग अब इस स्कूल से बहुत कुछ सपने पाले हुए हैं। उनका भरोसा है (यह जो नया मास्टर आया है) यह हमारे बच्चों की तकदीर बदल देगा। पांचवीं पास कर चुके कुछ बच्चे नवोदय विद्यालय में दाखिला पाने में सफल रहे हैं। गांव वालों को यह सुनना अच्छा लगता है, सबके ही बच्चे पढ़ने में अच्छे हैं।

बच्चे अपने ज्ञान को साझा करने और उस पर बात करने को लालायित रहते हैं। समूह में सीखने का माहौल बनने का लाभ उन बच्चों को सबसे अधिक हुआ जो टेक्स्ट में दिक्कत महसूस करते हैं। जो संकोची होते हैं और जिन्हें थोड़ा हटकर बैठने और चलने की आदत है। लेकिन एक्टिविटी बेस्ड पढ़ाई होने से वे भी बाकी बच्चों के साथ घुल मिल जाते हैं।

जब मेरे साथी कक्षा एक और दो के बच्चों के साथ गीत कर रहे थे। मैं तीसरी–चौथी कक्षा के बच्चों की कक्षा में प्रविष्ट हुआ। सभी बच्चे एक साथ उठते हुए मेरा अभिवादन करते हैं। इनका गुड आफ्टरनून ऐसा था जैसे कोई खूबसूरत सिम्फनी सुनी हो– कॉन्फिडेंट बच्चे। मेरे सामने एक शानदार दृश्य था। नितिन की स्कूल से गैर मौजूदगी और सहायक अध्यापिका के मुझे थोड़ी देर के लिए क्लास सौंप देने से मेरे लिए अवसर था बच्चों ने क्या सीखा है। यह भी कि बच्चे कैसे सीखते होंगे।

शायद गीत से शुरुआत अच्छी रहेगी। क्या कोई बच्चा मेरे लिए गीत गा सकता है। सभी बच्चों के हाथ खड़े हो गए। ऐसा कम ही देखने को मिलता है कि सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे मुस्कराते और खिलखिलाते दिखें। और जब एक पूरी कक्षा स्कूल में अचानक पहुंचे मेहमान पर झम्म से मुस्करा रही हो तो संवाद का धरातल ही अलग हो जाता है।

'अच्छा तो आप सभी गीत गाते हैं, आपमें से कोई ऐसा है जो कुमांऊनी गीत गा सके और अभिनय भी कर सके'। मेरे अनुरोध को झट से समझते हुए दो जोड़े बच्चे आगे कूद गए। मैंने पहले वाले जोड़े से अनुरोध किया।

यह गीत गांव की घसियारिन के काम और संघर्ष का गीत था। इसकी लय गहरी करुणा लिए थी। मैंने देखा आगे अभिनय के साथ गीत–गाते बच्चों को पूरी कक्षा से कोरस मिल रहा था। गीत में बहुत सारे पेड़–पौधों के नाम थे। गीत पूरा होने पर मैंने बच्चों को उनके अर्थ बताने के लिए कहा और एक छात्रा से उन्हें ब्लैक बोर्ड पर लिखने के लिए कहा। बच्चे गीत में आये पेड़ पौधों के नाम बताते गए और बच्ची उन्हें सही वर्ण के साथ साफ लिखावट में लिखती चली गयी।

बच्चों ने ठीक से स्थानीय वनस्पतियों को समझा था। ऐसा बहुत बार होता है कि बच्चे अपने या दूसरे परिवेश की चीजों को रट तो लेते हैं, लेकिन उनका वास्तविक बोध उन्हें नहीं हो पाता। इसके बाद बच्चों ने गांव में पैदा होने वाले अनाजों, फलों, फूलों और जानवरों के बारे में बताया। बच्चे इनके नाम जानते भी थे और उनका सही विवरण भी दे पा रहे थे। जैसे गहत,

राजमा, भट, लोबिया, सूंठ, हिसालू, काफल, किल्मोड़ आदि।

मैंने उनसे पूछा क्या कभी इन चीजों के बारे में सर बातें करते हैं? बच्चों ने बताया सर हमसे अक्सर 'आपने क्या नया देखा' पर बात करते हैं। एक बच्ची ने हंसते हुए बताया, कभी–कभी सर टामा भी दे देते हैं। सब देखकर आते हैं और सर पूछते ही नहीं। बच्चों से बातचीत की आदत और उनके देखे–समझे की साझीदारी किस तरह बच्चों को आत्मविश्वास से लबरेज कर देती है, यह स्कूल इसका उदाहरण है। बच्चे जिन चीजों को अपने करीब पाते हैं, जिन्हें महसूस करते हैं उनके वर्ण पकड़ना उनके लिए उतना ही मुमकिन होता जाता है।

बच्चों ने मुझे आटा पीसने वाली चक्की– पनचक्की (घराट) वह कैसे काम करती है, बकरी पालन और उससे होने वाली आमदनी, गांव के नालों और जलस्रोतों, थोड़ी दूरी पर स्थित लौहखम ताल, मालू का पेड़, आसपास के गांवों के नाम, कृषि उपकरणों के नाम और काम आदि के बारे में बताया। घरों के आसपास भीमल (भेकू) के इतने पेड़ क्यों लगे हैं, इसका भी ज्ञान उन्हें था। जो बच्चे हल्द्वानी और नैनीताल गए थे उन्होंने वहां के बारे में बताया। बच्चों की कॉपियां चित्रों और गतिविधियों से समृद्ध थीं।

कक्षा की अल्मारी में रक्खी गिनमाला के बारे में पूछा तो बच्चों ने आसानी से बता दिया। एक बच्चे ने तो मजाक किया यह हमारे किस काम की, इससे छोटे बच्चे सीखते हैं। मैंने पूछा यह आपके काम की क्यों नहीं तो उसने बताया इससे तो सौ तक ही गिन सकते हैं, हमें तो इससे ज्यादा आता है। मैंने फिर पूछा तो क्या हम और चीजों में भी गिनती कर सकते हैं। बच्चों के अलग–अलग जवाब थे। 'पत्तियां गिन सकते हैं', 'पत्थर गिन सकते हैं', 'गाड़ियां गिन सकते हैं', 'लकड़ियां' गिन सकते हैं, 'बकरियां' गिन सकते हैं। अलग–अलग और अनगिन जवाब गिनती के बारे में।

स्कूल से सड़क कितनी दूर है, यह कैसे मालूम पड़ेगा मेरे को? कुछ बच्चों ने बताया कदमों से चलकर और यह जानकार कि कदम को गणित में कितना सेंटीमीटर लिख सकते हैं। एक बच्चा पटरी लेकर मेरे कदमों के

पास आ गया। कदमों का सेन्टीमीटर करने के लिए। यह एक एक्टिव क्लास थी। थोड़ी देर में शिक्षिका आ गयीं। उन्होंने बच्चों से 'सामान्य ज्ञान' बताने के लिए कहा, जिसकी अब जरूरत नहीं थी। लेकिन बच्चे अब भी उतने ही उत्साह में लग रहे थे। उत्तराखण्ड के मानचित्र को सामने रखकर उनसे कुछ बातें हुईं।

उत्तराखण्ड के नक्शे में हमारा जिला कहां पर है?

नैनीताल जिले में हमारा विकास खंड कहां है?

राजधानी कहां है?

पड़ोस में कौन से राज्य हैं?

पड़ोस में कौन से देश हैं?

नैनीताल के पड़ोसी जिले पहचानिए?

बच्चे लगातार सही जवाब देकर मेरी ही परीक्षा ले रहे थे। कुछ सवालों या टर्म्स पर जहां वे अटक रहे थे तो तत्काल चर्चा करने लग जाते। आपस में पूछते–बताते और सही जवाब या कम से कम कोई जवाब तो तलाश ही लेते। बेजवाब होना उन्हें मंजूर नहीं था। मैडम के कहने पर उन्होंने मुझे पार्ट्स ऑफ बॉडी, अंग्रेजी में फूलों, सब्जियों और फलों के नाम बताये। अंग्रेजी वाक्यों में अपने नाम, अपने माता–पिता और भाई–बहनों के नाम भी बताए। ऐसा लगा कि बच्चों को अंग्रेजी में पढ़ाने का विशेष प्रयास यहां कुछ समय से हो रहा है। मैडम ने मुझे बताया कि गांव के लोगों की इच्छा है कि उनके बच्चों को अंग्रेजी आये। वैसे यहां आसपास कोई 'अंग्रेजी मार्का' प्राइवेट स्कूल नहीं है लेकिन सुगम स्थानों में रहने वाले अपने नाते–रिश्तेदारों के बच्चों को देखकर उन्हें ऐसा लगता होगा कि अंग्रेजी जब तक नहीं आई, कुछ नहीं आया। मैं कक्षा से बाहर निकला तो पहली–दूसरी कक्षा के बच्चे मेरे साथी को घेरे हुए थे। बच्चे होड़ ले रहे थे, इस बात के लिए कि उन्हें सुना जाय।

सुगम क्षेत्र के स्कूलों में बढ़ती जा रही शिक्षकों की तादाद और एकल

शिक्षक वाले बनते जा रहे दुर्गम स्कूल। अथवा सुगम स्कूलों में घटती बच्चों की संख्या और दुर्गम स्कूलों पर अब भी अभिभावकों की निर्भरता। नगरों के लिए दीवानगी और गांव के बेबस लोगों की कहानी।

इन अंतर्विरोधों के बीच नितिन देवरानी जैसे शिक्षक का दुर्गम में डटे रहना, वहां होने पर पछतावा न करना और बच्चों की बेहतरी में अपने जीवन का अर्थ तलाशना, तबादले का प्रयास न करना, क्या यह कोई धारा हो सकती है? ऐसी महीन धारा जो एक दिन गंगा को उल्टा बहना सिखाएगी। या उल्टी गंगा को सुलटा बहना सिखा देगी। क्षेत्र के लोगों के बीच उन्हें भरपूर स्नेह हासिल है। अभिभावक उनसे अपने नौनिहालों के लिए अपेक्षाएं पाले हैं। नितिन नित नए प्रयोग करते हैं। हर बच्चा जरूरी है उनके लिए और सबसे बड़ी बात 'पिछड़ेपन' से नहीं झेंपते। नितिन या नितिन जैसे चंद शिक्षक कोई फरिश्ते तो नहीं हो सकते, लेकिन क्या उनसे एक बेहतर इंसान बनना सीखा जा सकता है?

(नितिन देवरानी जी की भास्कर उप्रेती से हुई बातचीत पर आधारित)

विद्या लोहनी
वार्डन,
कस्तूरबा गांधी
बालिका विद्यालय
ब्लाक – बाजपुर
जनपद – उधमसिंह नगर

एक स्कूल जो एकदम घर जैसा है

अनुदेशिकाएं – शांति, लक्ष्मी, अनीता
भोजनमाता – नवीन, सुमन
चौकीदार – राजेश
नामांकन – 50

जैसे ही एक इमारत का गेट खुलता है, एक सुंदर सी बगिया झांकती नजर आती है। गेट के दोनों ओर सुंदर रंगोलियां मुस्कुराती हैं और गेट के अंदर लहलहाती बगिया। यहां पहुंचते ही सकारात्मकता का अहसास छूने लगता है। जैसे–जैसे हम अंदर जाते हैं एक सुंदर, सजा संवरा, अपनेपन से सजाया हुआ घर खुलता जाता है। हां, घर ही तो है यह। उन पचास बच्चियों का घर जिनके पास स्कूल आने–जाने की न स्थिति थी, न हालात। सरकार की NPEGEL (नेशनल प्रोग्राम फॉर गर्ल्स एट एलमेंटरी लेवल) योजना के तहत इन स्कूलों बालिका विद्यालय की बुनियाद पड़ी। अक्सर कागजों में योजनाएं तो बहुत सुंदर सी बन जाती हैं लेकिन हकीकत का सफर तय करते–करते वो जर्जर सी रह जाती हैं। लेकिन बाजपुर के इस केजीबीवी ने योजनाओं की सुंदरता को काफी हद तक जर्जर होने से बचा लिया है।

2007 में बाजपुर के इस विद्यालय की बुनियाद पड़ी। एक छोटे से कमरे में बच्चियां किसी तरह बसर करती थीं। 2009 में विद्या लोहनी जी ने यहां ज्वॉइन किया। विद्या जी के लिए स्कूल में काम करना नौकरी करना नहीं बल्कि इन पचास बच्चियों में अपने परिवार को महसूस करने जैसा है। ज़ाहिर है, वो हर बच्ची के लिए दिलोजान से जुट गईं। उनकी पहली चुनौती थी परिसर। जिस परिसर में यह विद्यालय आज मुस्कुरा रहा है, उन दिनों यह उजड़ा मैदान था। न परिसर में बाउंड्री थी न कोई और इंतज़ामात। हालांकि यह बिल्डिंग थी स्कूल की ही। एक कमरे में रह रही बच्चियों का हाथ थामा और नई बिल्डिंग का रुख किया। लोगों ने कहा, यह एक बचपना है, जिद है, मूर्खता है, लेकिन मेरे लिए वो मेरे बच्चों के लिए मेरा प्यार था। मुझे अपने ऊपर भरोसा था कि मैं अपनी बच्चियों को कुछ होने नहीं दूंगी।

शुरू में बहुत दिक्कतें आती थीं लेकिन बच्चियों ने और स्टॉफ के लोगों ने साथ मिलकर हर मुश्किल का सामना किया।

वो सांप का डर, वो नाव चलने वाला परिसर....

उन दिनों इस परिसर की कोई बाउंड्री नहीं थी। सुरक्षा का प्रश्न सूरज ढलते ही खड़ा हो जाता था। लेकिन आसपास के लोगों ने हौसला बढ़ाया। कोई मुश्किल आती तो वो लोग साथ खड़े होते। यहां आने के 3 साल बाद इस परिसर की बाउंड्री बनी। कई तरह की दिक्कतें आईं लेकिन मजाल है बच्चियों को कोई खरोंच भी आई हो।

कोई यकीन नहीं करेगा कि आज जहां महकती हुई बगिया है, पानी बरसते ही वहां तालाब सा बन जाता था। इतना पानी कि नावें चल जायें। रात को बच्चे सोते थे और कहीं से भी सांप निकल आते थे। वो काफी दहशत भरे दिन थे वो। रोज रात हम डरते हुए अपने बिस्तरों को झाड़ते कि कहीं कोई सांप न छुपा हो...सुबह जब स्टाफ के लोग लौटते तो पहला सवाल यही होता कि मैडम जी, आज सांप तो नहीं निकला। शांति, लक्ष्मी, अनीता मुस्कुरा देती हैं। वो इस बात को आगे बढ़ाते हुए कहती हैं कि हम जब सुबह आते तो इसी चिंता के साथ कि कहीं फिर से सांप न निकला हो...कई बार डर गलत साबित होता तो कई बार सही भी।

बच्चियों को स्कूल से जोड़ने के लिए समुदाय से जुड़ना अन्य चुनौतियों में से एक थी। ज्यादातर बालिकाएं एससी/एसटी या मुस्लिम समुदाय से हैं। अभिभावकों के मन में आवासीय विद्यालय को लेकर खौफ और अविश्वास का भाव था। उस अविश्वास और भय को जीतना एक चुनौती थी और जो

बच्चियां विद्यालय में आ गई थीं, उनके लगातार बने रहने की चुनौती दूसरी।

अनुशासन भी एक चुनौती

ये बच्चे घर में व समाज में एकदम खुले माहौल में रहने के आदी होते हैं। किसी की सुननी नहीं, पढ़ने–लिखने, नहाने धोने, सलीके से बात करने की कोई बात नहीं, अनुशासन तो उन्हें बेड़ियों सा मालूम होता। यहां रोज नहाने, साफ रहने, हाथ धोकर खाना खाने, सलीके से बात करने, पढ़ने की बात होती तो बच्चियां शुरू–शुरू में उकताने लगतीं। हालांकि मौज–मस्ती होती है यहां भी लेकिन एक सलीके के साथ। अल्हड़ सी उम्र में सलीके की बंदिशें अक्सर बच्चियों को रास नहीं आतीं और वो वापस लौट जातीं। हमें देखना पड़ता कि आखिर मामला क्या है। कई बार घर जाकर मालूम होता कि बच्चों ने कहा कि स्कूल बंद है और वो खेतों में घूम रहे हैं। इन सब चुनौतियों से दो–चार होना मानो रोज़ का काम था। लेकिन अब यह दिक्कत नहीं है। अब बच्चियों का मन स्कूल में लग गया है। अब तो उन्हें घर में कम अच्छा लगता है। घर के लोग बताते हैं कि जब भी घर आती हैं तो हमें कोई न कोई बात सिखाया करती है।

मिल–जुलकर चल रहे हैं सफर में

इस केजीबीवी की सफलता का श्रेय किसी एक को लेना मंजूर नहीं। बल्कि विद्या जी तो इसे सफलता मानती भी नहीं। उनके हिसाब से अभी यहां बहुत कुछ होना बाकी है। लेकिन अगर बच्चियों की मुस्कुराहटें देखें, उनके सीखने की लगन और खुले व्यक्तित्व पर नजर डालें तो सफलता असफलता के तमाम मुगालतों से दूर स्कूल की पूरी टीम के पीछे खड़े होने का जी तो चाहता है।

शिक्षिकाएं भी, सखी भी

एक तरफ शांति, अनीता, लक्ष्मी बच्चों के साथ खेलती हैं, कूदती हैं। सखी की तरह उनकी बातों को साझा करती हैं, उनकी भावनात्मक जिज्ञासाओं

व समस्याओं को सहेजती हैं, वहीं वो उनकी पढ़ाई का भी ध्यान रखती हैं। गणित, विज्ञान, भाषा, संस्कृत...सब मिल–जुलकर पढ़ाती हैं। विषयों को पढ़ाते हुए ये अनुदेशिकाएं सामयिक विषयों पर भी इन बच्चियों से चर्चा करना नहीं भूलतीं। समाज में पहले से व्याप्त पूर्वाग्रही मानसिकताओं को तोड़ने की कोशिश होती है। अनीता बताती हैं कि कोई बच्ची बुरा सा मुंह बनाकर कहती है, मैडम जी वो लड़की किसी लड़के के साथ बैठी थी तो वो हंसकर उनके भीतर के पूर्वाग्रहों को तोड़ते हुए कहती हैं कि तो इसमें तो कोई बुराई नहीं। लड़कों के साथ बैठना, खेलना, बात करना बुरा नहीं है। बुरा अगर कुछ होता है तो वो होता है अंदर का भाव। स्वस्थ भावना के साथ हम बिना लड़की–लड़के का भेद किये एक दूसरे के साथ खेल भी सकते हैं, बात भी कर सकते हैं।

11 से 15 वर्ष की आयु की बच्चियां यहां आमतौर पर हैं। यह उनके शारीरिक व भावनात्मक परिवर्तन का भी दौर है। इसलिए इन अनुदेशिकाओं का रोल एक मां का, बहन का और सखी का भी होता है।

बच्चियों में एक खुलापन है। लक्ष्मी कहती है कि यह घर है उनका। घर में तो बच्चों को खुला होना ही चाहिए। हम सब एक परिवार ही तो हैं।

खिलती हैं खिलखिलाहटें यहां

बच्चियां तो जैसे खिलखिलाहटों का खुला आसमान हैं। बात करने को आतुर, साथ ही शर्मीलापन भी। तस्वीरों के फ्रेम में आने का मन भी और झिझक भी। उनके फेवरेट हीरो की बात होती है तो मुंह पर हाथ रखकर फिस्स से हंस देती हैं...सब एक–दूसरे को ठेलते हुए कहती हैं तुम बताओ... तुम बताओ...ऋतिक रोशन कोई कहती है...रणबीर कपूर दूसरी कहती है. शाहिद कपूर का नाम कहीं से आता है...और हर नाम के साथ अल्हड़

कहकहे ज्यादा मुक्त होते जाते हैं....कोमल...को कैटरीना पसंद है...कोई कहती है...कोमल शरमा जाती है...धत्त मुझे कहां...नाजुक उम्र की मुस्कुराहटें एक बार फिर से जिंदगी की कोमलता और मिठास के करीब ले जाती हैं।

अन्याय सहना मत

यहां की अध्यापिकाओं ने बच्चियों को निर्भीक बनाया है। विद्या मैडम बच्चों को सहनशील होने की सलाह नहीं देतीं बल्कि कहतीं है कि अन्याय को सहना मत। बस इतना ध्यान रहे कि खुद किसी के प्रति अन्याय करना भी नहीं। वो यह बताते हुए असमंजस भी साझा करती हैं कि बच्चियां हैं तो कम उम्र की ही। डर भी लगता है कि कहीं गलत जगह बात पर रिएक्ट न करने लगें...इसलिए बार–बार समझाना पड़ता है कि सहो मत, कोई गलत बात देखो तो बोलो, चुप मत रहो लेकिन यह भी ध्यान रखना कि इसमें कोई जल्दबाजी न हो।

एक बार हमारे स्कूल की एक लड़की ऑटो में कहीं जा रही थी। कोई लड़का उससे छेड़छाड़ कर रहा था। उसने उस लड़के को जमकर धुन दिया। ताईक्वांडो सीखने से लड़कियां शारीरिक रूप से भी मजबूत हुई हैं। जब वो लौटकर आई तो उसने बताया कि मैडम जी मैंने उसको दो बार मौके दिये। एक बार घूरकर देखा और चुप रही। दूसरी बार मना किया कि बद्तमीजी न करे...लेकिन जब तीसरी बार भी उसने वही हरकत की तो मैंने उसको धुन दिया...मैंने ठीक किया न मैडम जी...वो उत्साह से छलक रही थी।

यह किस्सा जब हम सुन रहे थे तब भी वो बच्ची मुस्कुरा रही थी। उसकी सहेलियां बता रही थीं, क्या घुमा के लात मारी उसको मैडम जी...वाह... उनके छलकते हुए उत्साह और हिम्मत में मुझे एक ऐसे समाज की झलक दिखी जहां अन्याय का प्रतिकार संभव होगा। जहां लड़कियों को गऊ बनकर खूंटे से बंधे रहकर चुपचाप सब सहते हुए जीवन बिता देने की हिदायतें नहीं हैं...

हमारे वापसी के कदमों में उम्मीद की ताकत थी। हम लौटते हैं यह सोचते हुए कि जब उनसे यह पूछा था कि एक कोई ख्वाहिश, कोई तमन्ना जो पूरी करने को मिले तो क्या चाहोगी...और पूरा समूह कहता है कि आप फिर जल्दी से आना... मन भावुक हो उठता है और कदम मजबूत...कि वो सही सफर पर हैं...

यहां–

- बच्चियां निर्भीक हैं।
- वो पढ़ाई के साथ–साथ दूसरी कलात्मक अभिरुचि की चीजों से भी जुड़ी हैं।
- हस्तकला के प्रशिक्षण जैसे, सिलाई, कढ़ाई, ऑरिगेमी आदि यहां दिये जाते हैं।
- उन्हें यहां ताईक्वाडो की ट्रेनिंग दी जाती है
- संगीत के लिए प्रोत्साहित किया जाता है
- बच्चियां दूसरे स्कूलों में प्रतियोगिताओं से खूब सारे मेडल व कप लेकर आती हैं
- बच्चियों के सोने की व्यवस्था, उनके शौचालय की व्यवस्था बेहतर है, साफ–सुथरी है
- खाने के लिए डाइनिंग टेबल है
- अभिव्यक्ति की पूरी आजादी है।

दूसरी ओर भोजनमाताएं उनके स्वाद का ख्याल रखते हुए खाना बनाती हैं। सब लोग मिल–जुलकर इस जगह को साफ, सुंदर बनाने का प्रयास करते हैं।

(विद्या लोहनी जी की प्रतिभा कटियार से हुई बातचीत पर आधारित)

Azim Premji Foundation

उत्तराखण्ड

उम्मीद जगाते शिक्षक

Azim Premji Foundation

अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित
उत्तराखण्ड स्टेट इंस्टीट्यूट, 53 ई.सी. रोड, देहरादून-248001 (उत्तराखण्ड)
फोन/फैक्स : 0135- 2659864